अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-38, अंक-15, 16-31 मार्च, 2015

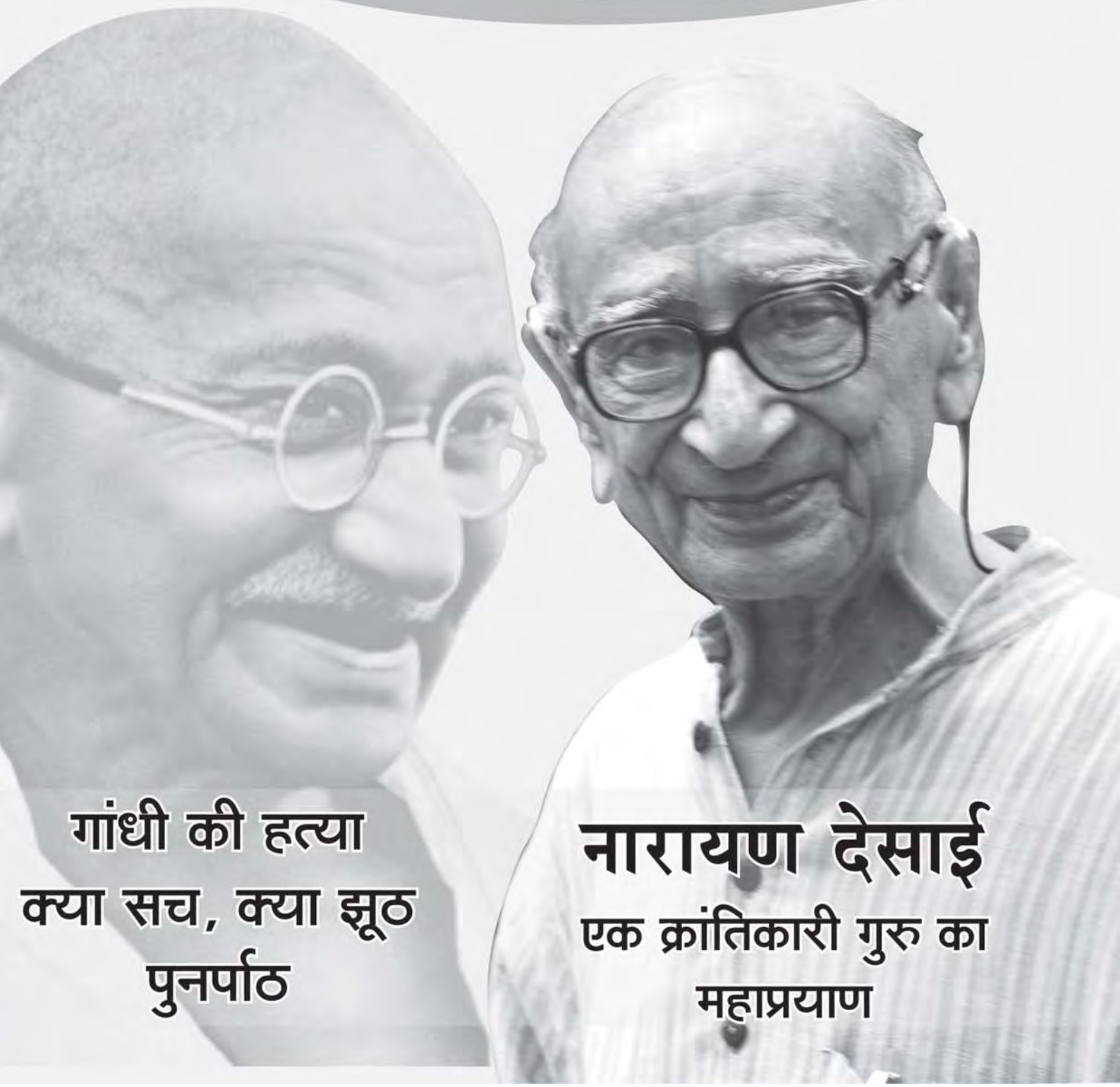

गांधी की हत्या
क्या सच, क्या झूठ
पुनर्पाठ

नारायण देसाई
एक क्रांतिकारी गुरु का महाप्रयाण

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुखपत्र

सर्वोदय जगत

सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 38, अंक : 15, 16-31 मार्च, 2015

संपादक — **बिमल कुमार**, मो. : 9235772595
कार्यकारी संपादक — **अशोक मोती**, मो. : 7488387174

संपादक मंडल

डॉ. रामजी सिंह **भवानी शंकर 'कुसुम'**
बिमल कुमार **अशोक मोती**

संपादकीय कार्यालय

सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : ssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 38350201000431O
IFSC No. UBIN-0538353

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	2000 रुपये
आधा पृष्ठ	:	1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ	:	500 रुपये

इस अंक में...

1. गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ 2
2. नारायण देसाई - निरंतर परिष्कार... 3
3. श्री नारायण देसाई को श्रद्धांजलि... 4
4. चेर्नोबिल : भारत के लिए सबक... 5
5. गांधीजी की शिक्षा नीति... 7
6. 'सेक्युलर' तथा 'समाजवादी' प्रवृत्ति... 9
7. बराक ओबामा ने भी याद.... 10
8. अलोकतांत्रिक अध्यादेश राज... 12
9. गांधी-विचार को प्रतीक बनाएं... 13
10. अध्यादेश से बापू का संदेश... 14
11. जलवायु न्याय में है जलवायु संकट... 16
12. निवेश संधियों से बढ़ते जोखिम... 17
13. गतिविधियां एवं समाचार... 19
14. कविता : किसी अंधे कुएँ में गिर... 20

'सर्वोदय जगत' में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनके साथ सर्व सेवा संघ या संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

गतांक से आगे

गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ?

❑ चुनीभाई वैद्य

हिन्दू धर्म के ठेकेदारों के लिए यह सब असह्य बनता जा रहा था। पूणे के इन धर्मधुरन्धरों ने पेशवाओं के जमाने से राज्यसत्ता का स्वाद चखा था। इस प्रकार धर्मसत्ता और राजसत्ता का संयुक्त अहंकार फूँफकारते हुए अपना फन पटक रहा था। लेकिन कोई भी गांधीजी की विजय-यात्रा को रोकने में समर्थ नहीं था। गांधीजी उनकी आँखों की किरकिरी बने हुए थे। उनको लगता था कि किसी भी प्रकार गांधीजी से मुक्ति मिलनी चाहिए, तभी समाज में उनका वर्चस्व फिर से कायम हो सकेगा। गोडसे का दावा था कि गांधीजी मरते समय *'हे राम'* नहीं बोले। इस बात से भी उनके स्तर का पता चलता है। इतनी छोटी-सी बात उनके लिए बड़ी चिन्ता का कारण बन गयी। क्योंकि उन्हें लगता है कि अगर यह सिद्ध हो जाय कि *गांधी रामभक्त* थे तो फिर उनके 'राम-नाम के ठेके' का क्या होगा? इसलिए यह उनको कैसे पुसाता? और, आम हिन्दुओं के मन पर गांधीजी की जो पकड़ थी, उसे समाप्त करना उनके जीते-जी तो असम्भव था। तब एक मात्र उपाय उन्हें सूझा कि किसी भी प्रकार गांधीजी को समापत कर दिया जाय। यही है गांधी-हत्या के पीछे पूणे के कट्टर हिन्दूवादियों के षड्यंत्र का प्रमुख कारण!

इसके लिए उन्होंने गुप्त रूप से, लुकछिप कर हत्या के षड्यंत्र रचे। भोले-भाले बच्चों के मन में विष घोलना शुरू किया। मनगढ़न्त किस्से जोड़कर मुसलमानों के खिलाफ हिन्दुओं के दिलों में वैरभाव भरे। मुसलमानों को अपनाकर राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के, गांधीजी के प्रयासों को मुसलमानों की खुशामद बताकर हिन्दू युवाओं के दिलों में जहर भरा और उन्माद पैदा किया। इतना होते हुए भी बहुत ही कम संख्या में युवा उनके साथ गये। लेकिन हत्या के लिए तो एक व्यक्ति भी काफी होता है। उस एक की पूर्ति गोडसे ने की।

प्रश्न : *एक और बात समझ में नहीं आ रही है, वह भी पूछ लेता हूं। गांधीजी हिन्दुओं को जितने कठोर वचन कहते थे, उतने कठोर वचन मुसलमानों को नहीं कह पाते थे। आपका क्या मन्तव्य है?*

उत्तर : गांधीजी खुद को सनातनी हिन्दू मानते थे, और एक नैष्ठिक व्यक्ति अपने आत्मीय जन से जिस प्रकार बातें करता है, उसी प्रकार वे लोगों से बातें करते थे। आमतौर पर कठोर वचन बोलना उनके स्वभाव में नहीं था। फिर भी कभी-कभार, स्थिति असह्य होने पर, कुछ कठोर बातें कह देते थे। ऐसी ही कुछ कठोर बातें आपकी जानकारी के लिए प्रस्तुत कर रहा हूं। ये बातें महात्मा गांधी के सचिव प्यारेलाल ने अपने महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'महात्मा गांधी : पूर्णाहुति' में लिखी है।

''दूसरे दिन दिल्ली के कुछ मौलाना गांधीजी से मिलने आये। वे अपने साथ कुछ जंग लगे हुए हथियार लाये और बोले कि आपकी अपील के जवाब में मुसलमानों ने ये हथियार सौंपे हैं। गांधीजी ने उनसे कहा कि यह तो केवल ढोंग है। इससे उनका हृदय बदल गया है, ऐसा प्रकट नहीं होता। मौलाना लोगों ने विरोध किया और कहा कि आपके आने से स्थानीय मुसलमानों के दृष्टिकोण में 'बड़ी तब्दीली' आयी है। हमें भरोसा है कि थोड़े ही समय में शहर में पूरी शांति का राज्य फैल जायेगा।'' (...क्रमशः) ❑

संपादकीय

नारायण देसाई – निरंतर परिष्कार, निरंतर नव-संस्करण

श्री नारायण देसाई का महाप्रस्थान, हमें यह स्मरण कराता रहेगा कि कोई व्यक्ति अपने विचारों को जीवनपर्यन्त कैसे जी सकता है। बचपन में जिसे गांधी एवं कस्तूरबा जैसी विभूतियों की गोद में खेलने का अवसर मिला, उनका स्नेह मिला, उन स्मृतियों को उन्होंने जीवन की ताकत बनाया, विशेषाधिकार नहीं बनाया, और सहज जीवन बिताया। विचारों के विकासक्रम में, उन्होंने समाज को भी दिया तथा स्वयं को भी उस कसौटी पर खरा उतारते चले गये।

गांधी, विनोबा और जेपी जिन विचारों को नये समाज निर्माण के लिए गढ़ रहे थे, उन विचारों को उन्होंने आत्मसात् किया और फिर उन विचारों के आलोक में कार्यकर्ता निर्माण तथा लोकशक्ति निर्माण के कार्य को आगे बढ़ाने में वे लगे रहे। सर्वोदय जगत की जिम्मेदारी, शांति सेना का कार्य तथा लोक समिति को विस्तार देने के प्रयास, उनके इसी रुझान को इंगित करते हैं। प्रशिक्षण के कार्य में उनकी विशेष रुचि इस कारण थी कि इस माध्यम से देश के अहिंसक क्रांतिकारी युवाओं का निर्माण वे निरंतर करते रहें। वेडछी में संपूर्ण क्रांति विद्यालय, इसका ज्वलंत उदाहरण है कि वे जीवन के अंतिम समय तक युवाओं को अहिंसक क्रांति के कार्य की ओर प्रेरित करने के लिए कितने गंभीर थे।

शांति सेना के लिए कार्य करने का उन्हें लम्बा अनुभव था। किन्तु गुजरात में हुए सन् 2002 के दंगों के बाद, उन्होंने लोक-संवाद के लिए एक नयी विधा का आविष्कार किया। यह था गांधी-कथा का। गांधी-कथा के माध्यम से उन्होंने देशभर में नये तरह से जागृति फैलाने का काम किया।

नारायण भाई निरंतर लेखन का कार्य भी करते रहे। नयी-नयी परिस्थितियों के उत्पन्न होने पर उन पर सर्वोदय की दृष्टि से वे निरंतर लिखते रहे। विशेषकर सन् 1991 के बाद, जब वैश्विक पूंजी विस्तार ने लोक का दायरा खत्म करना शुरू किया तथा राजसत्ता भी अपनी जिम्मेदारियों से पीछे हटने लगा तो इस चुनौती के खिलाफ भी उन्होंने बिगुल बजाया। ये वो दौर था, जब हमारे बीच गांधी, विनोबा व जेपी जैसी विभूतियां नहीं थीं।

बिहार आंदोलन के प्रारम्भिक दौर में, जब जेपी अपने प्रोस्टेट का ऑपरेशन कराने के लिए वेल्लोर गये, तब जिन चार लोगों को उन्होंने अपनी अनुपस्थिति में आंदोलन को सँभालने तथा दिशा देने की जिम्मेदारी दी थी, उनमें नारायण भाई भी एक थे। जेपी के जाने के बाद संपूर्ण क्रांति के कार्य को आगे बढ़ाने तथा दिशा देने का कार्य वे निरंतर करते रहे।

गांधी विचार की प्रेरणा से सर्वोदय आंदोलन अपने आपको निरंतर परिष्कृत करता रहा, अपना नव-संस्करण विकसित करता रहा था। नारायण भाई इसके साक्षी भी थे तथा इसमें योगदान के भागीदार भी थे। इस प्रकार सर्वोदय विचार को जड़ विचार होने के बजाय निरंतर जीवन्त विचार बनाये रखने में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी।

सर्वोदय आंदोलन का पहला दौर राजसत्ता से बिना टकराव किये, ग्राम स्वराज्य के काम को आगे बढ़ाने का था। यह संभव हो सका था, क्योंकि आजादी के तत्काल बाद राजसत्ता में जो लोग गये थे, वे भी गांधीजी के अनुयायी थे। लेकिन एक समय ऐसा आ गया जब राजसत्ता से टकराव अपरिहार्य हो गया। ग्राम स्वराज्य के कार्य के लिए जिस लोकशक्ति व लोकसत्ता का निर्माण करना था, राजसत्ता उसमें बाधक हो रही थी। राजसत्ता लोक-विरोधी बन गयी थी। सर्वोदय के अंदर कुछ लोग चाहते थे कि शुरू में हमने राजसत्ता से न टकराने की जो नीति अपनायी है, उस पर कायम रहें। लेकिन जेपी के नेतृत्व में अधिकांश सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने माना कि राजसत्ता के विरुद्ध सत्याग्रह करने की नीति अपनाने का समय आ गया है। नारायण भाई इसे मानने वालों की प्रथम पंक्ति में थे।

इसी प्रकार सन् 1991 के बाद पूंजीवादी बाजार के वैश्वीकरण तथा भारत में सांप्रदायिक गिरोहों के गठजोड़ से भारत की आर्थिक आजादी और भारत की सामाजिक एकता खतरे में पड़ने लगी। तब नारायण भाई दोनों मोर्चों पर सक्रिय हो गये तथा सर्वोदय की नयी नीतियों के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

निरंतर परिष्कार एवं निरंतर नव-संस्करण का विकास, यही धरोहर वे हमारे लिए छोड़ गये हैं। शरीर का छूटना तो एक अटल सत्य है। लेकिन जिस परम्परा को हम ग्रहण करते हैं, उसका कितना विकास कर हम नयी पीढ़ी को सौंप कर जाते हैं, वही विरासत हमारे बीच बनी रह जाती है। नारायण भाई इसी विरासत के कारण हमारे बीच बने रहेंगे।

भूदान, ग्रामदान, ग्राम स्वराज्य, शांति सेना, लोक समिति, संपूर्ण क्रांति विद्यालय, पूंजीवादी बाजार के वैश्वीकरण का विरोध, गांधी-कथा और अपने अनेकानेक कार्यक्रमों के माध्यम से नारायण भाई स्वयं को और गांधी-विचारों को व्यक्त करते रहे। विचार के मूल तत्त्व को पकड़ने के बाद उसका सगुण रूप परिवर्तनशील होता है, लेकिन सगुण रूप का प्रकट होते रहना भी जरूरी होता है—यही नारायण भाई का जीवन था।

विमल कुमार

छपते-छपते : श्रद्धांजलि

श्री नारायण देसाई को सर्व सेवा संघ की श्रद्धांजलि

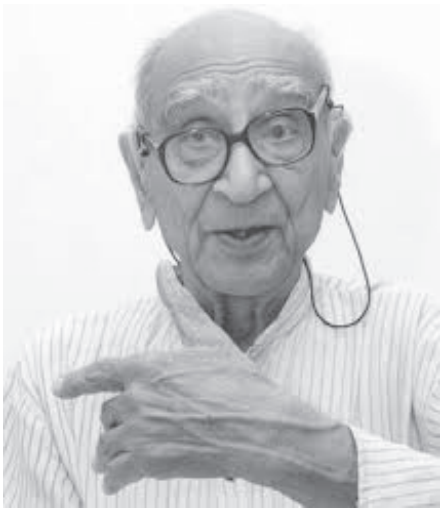

सर्वोदय आंदोलन के मार्गदर्शक एवं सर्व सेवा संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री नारायण देसाई का 15 मार्च 2015 को 90 वर्ष की आयु में महाप्रयाण हो गया।

सर्व सेवा संघ (अखिल भारत सर्वोदय मंडल) के अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही एवं राष्ट्रीय प्रवक्ता श्री भवानी शंकर कुसुम ने देशभर में फैले सर्वोदय कार्यकर्ताओं की ओर से अपने भूतपूर्व अध्यक्ष एवं पथ-प्रदर्शक श्री नारायण भाई को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा है कि श्री नारायण भाई का जाना गांधी युग के एक आधार स्तंभ का खोना है। आज जब देश में अलगाववादी एवं राष्ट्र-विरोधी ताकतें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के हत्यारे का महिमा मंडन करने की कोशिश कर रहे हैं तब श्री नारायण भाई की अनुपस्थिति महसूस हो रही है। हम श्री नारायण भाई से प्रेरणा लेकर गांधी के मार्ग को प्रशस्त करने का और उस पर अपने को समर्पित करने के संकल्प को दुहराते हैं।

श्री नारायण देसाई का जन्म 24 दिसंबर 1924 को वलसाड (गुजरात) में दुर्गा बहन एवं महादेव देसाई (गांधीजी के निजी सचिव) के घर हुआ। उन्हें गांधी की गोद में खेलने एवं गांधी के आश्रम में पलने-बढ़ने का सौभाग्य मिला। वे कभी भी विधिवत स्कूल नहीं गये, पर उन्होंने दुनिया के खुले विद्यालय में शिक्षा-दीक्षा पायी।

श्री नारायण भाई ने 19 नवंबर 1995 से 9 नवंबर 1998 तक सर्व सेवा संघ का नेतृत्व किया। इससे पूर्व शांति सेना एवं राष्ट्रीय लोक समिति की जिम्मेदारियों का सफलतापूर्वक निर्वहन किया। वे गुजराती साहित्य परिषद के अध्यक्ष, गुजरात विद्यापीठ के कुलपति, युद्ध विरोधी अंतर्राष्ट्रीय (वार रेजिस्टर्स इंटरनेशनल) के अध्यक्ष, स्वराज आश्रम, वेडछी के अध्यक्ष रहे।

अपने अध्यक्षीय कार्यकाल के दौरान श्री नारायण भाई ने उन्हें पुरस्कार के रूप में प्राप्त दो लाख रुपये की राशि सर्व सेवा संघ के स्थाई कार्यकर्ताओं के लिए स्थापित कोष को समर्पित कर दी थी।

1962 में चीनी हमले के बाद सर्व सेवा संघ ने नेफा में आपके नेतृत्व में अनेक शांति केन्द्र स्थापित किये। यहीं काम करते हुए उन्होंने प्रकृति प्रार्थना— *'हे ज्योतिर्मय आओ! मेरे वन के हर पल्लव पर अपना तिलक लगाओ'* की रचना की।

1974 में बिहार में जेपी के नेतृत्व में हुए जन आंदोलन में आप उनके अनन्य सहयोगी के रूप में अग्रिम पंक्ति में रहे। पौरुष ग्रंथि के ऑपरेशन के लिए जब जेपी को एक महीने के लिए वेल्लोर जाना पड़ा तब उन्होंने आंदोलन के लिए चार सदस्यीय संचालन समिति का गठन किया था। नारायण भाई उनमें एक थे।

सर्व सेवा संघ ने उनकी पुस्तकों— 'धरतीमाता की गोद में', 'कस्तूरबा', शांति-सेना', 'सोनार बांगला', 'विश्व की तरुणाई' आदि कई पुस्तकों का प्रकाशन किया। 'अग्निकुंडमा उगेलू गुलाब' (महादेव देसाई की जीवनी), 'मारूं जीवन एज मारी वाणी' (महात्मा गांधी की जीवनी), 'मने केम विसरे रे', 'संपूर्ण क्रांति ना स्वप्नद्रष्टा जयप्रकाश नारायण', 'गांधी क्यांक हशे भारत मां' आदि पुस्तकें लिखीं।

श्री नारायण भाई को उनके साहित्य तथा सार्वजनिक जीवन में विशिष्ट योगदान के लिए 1993 में साहित्य अकादमी पुरस्कार, 1994 में काका कालेलकर पुरस्कार, 1998 में युनेस्को का मदनजीत सिंह पुरस्कार, 1999 में जमनालाल बजाज पुरस्कार, 2001 में रणजीतराम सुवर्ण चंद्रक, 2004 में मूर्तिदेवी पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कारों एवं सम्मानों से नवाजा गया।

1975 में देश में आपातकाल की घोषणा हुई एवं संचार माध्यमों पर सेंसरशिप लगा दी गयी थी। ऐसी विकट परिस्थिति में भी नारायण भाई ने 'बुनियादी यकीन' नाम से एक भूमिगत सामयिक शुरू कर आंदोलन के समाचारों को लोगों तक पहुंचाया।

श्री बाबूभाई (कार्यकर्ता उन्हें प्यार से इसी नाम से पुकारते थे) के नेतृत्व में सर्वोदय आंदोलन के अनेक कार्यकर्ता प्रशिक्षत हुए। वे एक कुशल शिक्षक एवं प्रतिभाशाली प्रशिक्षक थे।

गांधी-विचार को जन-जन तक पहुंचाने के लिए आपने 2004 में संगीतमय 'गांधी-कथा' की रचना की, जिसका देश-विदेश में 120 से अधिक स्थानों पर मंचन किया गया।

10 दिसंबर 2015 को अस्वस्थ होने के बाद वे कोमा में चले गये थे। उपचार के लिए उन्हें सूरत के महावीर ट्रोमा सेंटर में भर्ती कराया गया। स्वास्थ्य में थोड़ा सुधार होने पर उन्हें कुछ दिन पूर्व संपूर्ण क्रांति विद्यालय, वेडछी लाया गया। यहीं उन्होंने 15 मार्च को प्रातः करीब 4 बजे अंतिम सांस ली।

सर्व सेवा संघ श्री नारायण भाई के परिवारजनों एवं संपूर्ण क्रांति विद्यालय के सभी कार्यकर्ताओं के दुख की इस घड़ी में गहरी संवेदना प्रेषित करता है। **–मारोती गावंडे**

कार्यालय मंत्री

स्मृति-शेष

चेर्नोबिल : भारत के लिए सबक

❑ नारायण देसाई

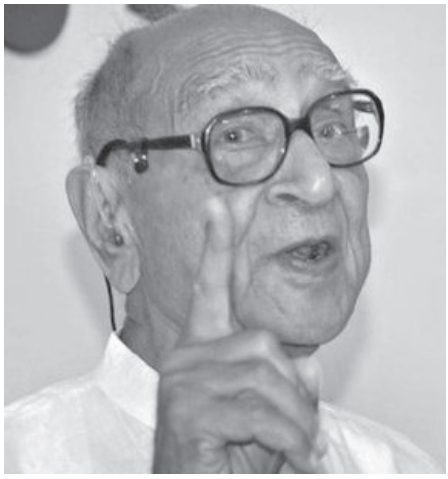

नारायण भाई का निधन अत्यन्त दुखद है। उनका यह लेख 25 दिसंबर 1986 को सप्रेस बुलेटिन में प्रकाशित हुआ था। तकरीबन तीन दशक बाद भी यह लेख प्रासंगिक बना हुआ है, क्योंकि भारत सरकार एक बार पुनः परमाणु के कथित शांतिपूर्ण उपयोग से बिजली उत्पादन करने में प्राणप्रण से जुटी है। इस बीच जापान के फुकिशिमा परमाणु संयंत्र दुर्घटना भी सरकारों को अपने निर्णय पर पुनर्विचार हेतु बाध्य नहीं कर पायी है। सर्वोदय जगत का यह अंक पूज्य नारायण भाई की स्मृति को समर्पित है। **–कार्य. सं.**

अप्रैल 1986 में रूस के चेर्नोबिल में हुई भीषण परमाणु दुर्घटना ने भारत को बहुत सबक सिखाये हैं। पहला सबक तो यह सिखाया कि 'शांति के लिए' अणु कार्यक्रम भी जनता के लिए खतरे से खाली नहीं है। दूसरा सबक यह कि हर परमाणु रिएक्टर में गफलत एवं दुर्घटना होने की सम्भावना होने पर विश्व भर के अणु उद्योग के समर्थक एकजुट होकर जनता से उस सत्य को छिपाने का प्रयास करते हैं। चौथा सबक यह कि दुर्घटनाओं के दुष्परिणामों से बचने के लिए हमारे पास न तो पर्याप्त साधन है, न कानूनी व्यवस्था है। और शायद सबसे बड़ा सबक यह सीखने को मिला कि इने-गिने तबकों तथा राजनैतिकों के निर्णय पर आधारित (केन्द्रीय) व्यवस्था अंततः आम जनता को बंधक में रखने वाली जनतंत्र विरोधी तानाशाही व्यवस्था सिद्ध होती है।

आइए हम इन सबको थोड़ा निकट से देखें। 'शांति के लिए परमाणु' यह बड़ा भ्रामक शब्द है। वास्तव में परमाणु शक्ति पैदा करने वाले हर देश में और विशेषकर अमेरिका और रूस में शांति के लिए अणु

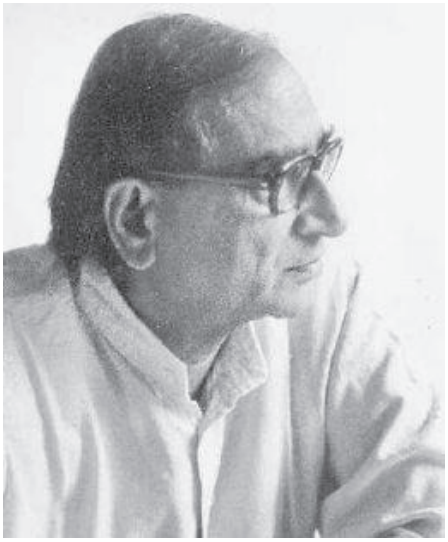

और शस्त्रों के लिए अणु का चोली-दामन का संबंध रहा है। यद्यपि भारत की घोषित नीति 'शांति के लिए अणु' की ही रही है। पर हमारे यहां भी परमाणु के लिए होने वाले शोध का बहुत सारा खर्च सुरक्षा खाते में पड़ता है। हमारे नेता लोग बीच-बीच में यह भी आश्वासन देते रहते हैं कि हम चाहें जिस समय अणु बम बना सकते हैं। अणु कचरे को 'रिसाइकिल' करने की प्रक्रिया ऐसी है कि जिसमें अणुबम के लिए कच्चा माल तैयार हो जाता है।

बहरहाल यहां सोचने लायक विषय तो यह है कि सिर्फ अणुअस्त्र कार्यक्रम ही नहीं शांति के लिए अणु कार्यक्रम भी खतरे से खाली नहीं है। रूस का यह रिएक्टर 'शांति' के लिए ही बना था। उसमें यह दुर्घटना हो ही गयी। यह भी स्मरण रहे कि यद्यपि चेर्नोबिल दुर्घटना आज तक की दुर्घटनाओं में सबसे बड़ी थी, लेकिन यह कोई पराकाष्ठा की दुर्घटना नहीं थी। भविष्य में इससे भी अधिक भयंकर दुर्घटनाएं हो सकती हैं। यह भी नहीं कि चेर्नोबिल की दुर्घटना इतिहास में प्रथम अणु दुर्घटना थी। दुनिया भर में आज तक छोटी-बड़ी चार हजार दुर्घटनाएं घट चुकी हैं। भारत में भी तीन सौ से अधिक बार छोटी-मोटी दुर्घटनाएं घटी हैं। अलबत्ता अणु वैज्ञानिक और राजनैतिक नेता इन्हें 'असाधारण घटना' कह कर उसकी भीषणता को छिपाना चाहते हैं, लेकिन जाहिर है कि नाम बदलने से गुण नहीं बदलता है।

परमाणु रिएक्टरों में फिर चाहे वह बिजली बनाने के लिए हो चाहे बम बनाने के लिए, दुर्घटना होने की अनेक सम्भावनाएं रहती हैं। दुर्घटना कितने प्रकार की हो सकती हैं। इसका अनुमान करके विशेषज्ञों ने बड़ी-बड़ी पोथियां तैयार की हैं। फिर भी अमेरिका में जब ब्राउन फेरी तथा थ्री माइल आइलैण्ड की दुर्घटनाएं हुई तब यही कहा गया था कि ऐसी दुर्घटनाओं का जिक्र हमारी हैण्ड बुक में नहीं था। दुर्घटनाएं प्रमुखतः निम्न कारणों से हो सकती हैं।

पहला कारण, यांत्रिक गड़बड़ी। हमारे केवल एक तारापुर केन्द्र में ही अनेकों बार इस प्रकार की यांत्रिक गड़बड़ी हुई है। राजस्थान का एक अणु रिएक्टर तो यांत्रिक गड़बड़ी से बरसों तक जूझने के बाद और

करोड़ों रुपये पानी करने के बाद इस साल नाकाबिल दुरुस्ती घोषित किया गया। अब उसे भय मुक्त करने के लिए इतना खर्च किया जाएगा, जो अनुमानतः उसे बांधने के खर्च से भी बढ़ कर होगा। दूसरा कारण है, मनुष्यकृत गलती। वियेना में हुई विश्व अणु वैज्ञानिकों की सभा में रूसी वैज्ञानिकों ने यही रिपोर्ट दी कि चेर्नोबिल की दुर्घटना इसी कारण से हुई थी। इस प्रकार का कारण बताने से जहां एक ओर यह भ्रम पैदा होता है कि परमाणु तकनीकी में यांत्रिक गड़बड़ी नहीं हो सकती, वहीं दूसरी ओर वह यह सिद्ध भी करती है कि हर रिएक्टर में मानवीय भूल के कारण दुर्घटना की संभावना बनी ही रहेगी। दुर्घटना का तीसरा कारण हो सकता है प्राकृतिक प्रकोप—जैसे भूचाल, बाढ़ या ज्वालामुखी विस्फोट। हम पाठकों का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहते हैं कि हमारे देश में दो अणु केन्द्र—नरोरा तथा काकरापार—ऐसे स्थानों पर बनाये गये हैं जो क्रमशः भूकंप संभावनायुक्त सीस्मिक जोन—चार और तीन में बने हुए हैं। इनमें से एक स्थान तो वैज्ञानिकों की सलाह की अवहेलना कर केवल राजनैतिक कारणों से चुना गया था। यदि नरोरा में कोई बड़ी दुर्घटना हो तो गंगा घाटी का घनी जनसंख्या वाला क्षेत्र पीढ़ियों तक निकम्मा हो जाएगा। चौथा कारण हो सकता है शत्रु का आक्रमण। अगर शत्रु का सामान्य बम भी हमारे अणु ऊर्जा बनाने वाले संयंत्र को तोड़ दे तो उससे जो विकिरण फैलेंगे वह शत्रु के बम को अणु बम जितना ही भयानक बना देगा। पांचवां कारण आतंकवादियों द्वारा तोड़-फोड़ की कार्यवाही। जिस देश में प्रधानमंत्री तथा वरिष्ठ पुलिस अधिकारी आतंकवादियों के उत्पात के निशाने पर बन सकते हैं, उस देश में अणु केन्द्रों को निशाने के खतरे से खाली कैसे माना जा सकता है?

चेर्नोबिल की दुर्घटना ने और भी कई ऐसी चीजें दुनिया के सामने प्रकट की हैं जो हर नागरिक को समझ लेनी चाहिए। रूस ने पहले तो कुछ दिन इस घटना को छिपाया। फिर जब यह असंभव हो गया तब उसे कम करके दिखाने का प्रयास किया गया। आज से तीस साल पहले युराल पहाड़ियों पर घाटी दुर्घटना को रूस ने सफलता से छिपाया था। लेकिन सत्य को छिपाना अब रूस के बस की बात नहीं रही। ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस, केनेडा आदि हर देश ने अपनी-अपनी दुर्घटना के समय प्रायः इसी प्रकार सत्य को छिपाने का प्रयास किया था। सौभाग्य से आज की दुनिया विज्ञान के कारण इतनी छोटी बन गयी है कि इस प्रकार के प्रयास व्यर्थ सिद्ध होते हैं।

यूरोप, अमरीका तथा भारत के भी कुछ अणु वैज्ञानिकों तथा नेताओं ने चेर्नोबिल की दुर्घटना के बाद यह भ्रम फैलाया कि यह घटना रूस में ही हो सकती थी हमारे यहां नहीं। यह जनता की आंखों में धूल झोंकने का ही प्रयास था। यह बात सच है कि हर अणु केन्द्र में कुछ भिन्न-भिन्न तकनीकें प्रयोग की जाती हैं। दुर्घटनाएं भी प्रायः विभिन्न कारणों से होती हैं। किन्तु यह कहना कि ऐसा हमारे यहां नहीं हो सकता सरासर गलत है। यह कहना कि रूस की तकनीक पुरानी, हमारी नयी है, भी गलत है। हालांकि रूस के कुछ अणु रिएक्टर पुराने हैं, लेकिन जिस रिएक्टर में विस्फोट हुआ वह तो भारत के अधिकांश रिएक्टर से नया यानी अभी तीन-चार साल पहले ही 'क्रिटिकल' बना था। दूसरा तर्क यह दिया जाता है कि हमारे यहां दोहरा कटेन्मेट है, वहां वैसा नहीं था। किन्तु यह स्मरण रहे कि चेर्नोबिल की जिस दीवाल को फोड़कर अग्नि शिखाएं लहरा उठी थीं, उनकी भार क्षमता 28 पौंड प्रति वर्ग इंच थी। जो कि हमारे संयंत्रों से प्रायः दूनी थी। हमारे यहां सारा दारोमदार 'केनू' रिएक्टर्स पर रखा गया है। केनेडा में इस प्रकार के रिएक्टर्स में भी दुर्घटना हो चुकी हैं।

चेर्नोबिल की दुर्घटना के विषय में यदि कोई एक अच्छी चीज हुई तो वह थी कुछ पराक्रमी लोगों द्वारा जान का जोखिम उठा कर भी उसका मुकाबला करना। यह अनुमान किया जा सकता है कि ऐसे साहसी लोग हमारे यहां भी निकल आयेंगे किन्तु वहां आस-पास की जनता को जिस शीघ्रता से हटाया गया वैसे स्थानान्तरण की कोई व्यवस्था या पूर्व तैयारी हमारे यहां नहीं है। इस बात को तो हमारे प्रधानमंत्री ने भी स्वीकार किया है। ❑

विरासत

गांधीजी की शिक्षा नीति

❑ नारायण देसाई

गांधीजी ने 22-23 अक्टूबर, 1937 को वर्धा में शिक्षाविदों के एक राष्ट्रीय सम्मेलन में पहली बार राष्ट्रीय शिक्षा नीति के बारे में अपने विचार रखे थे। किन्तु इस विषय में उनके प्रयोग एवम् चिन्तन-मनन चालीस वर्ष से भी अधिक समय से चल रहा था। उनके अनुसार इस संबंध में निम्न चार चुनौतियां थीं :

देश में प्रवर्तित जीवन-विमुख शिक्षा का विकल्प बताना, गुलामी की शिक्षा के स्थान पर आजादी की शिक्षा की रूपरेखा प्रस्तुत करना, गरीबी मिटाने वाली शिक्षा का स्वरूप समझाना और भेदभाव मिटाने वाली शिक्षा का स्वरूप प्रकट करना।

जीवन शिक्षा

गांधीजी बच्चों के दिमाग में सीधी ठूसी जाने वाली जानकारी को शिक्षा मानने के लिए तैयार नहीं थे। वह ऐसी शिक्षा चाहते थे जो बच्चों को जीवन जीना सिखाये। जीवन जीना तो वही शिक्षा सिखा सकती है जो जीवन के द्वारा दी जाती है। शिक्षा के लिए नानाविध उपकरणों का ढेर लगा देने भर से जीवन शिक्षा नहीं आयेगी। उसके लिए छात्र व शिक्षक में जीवंत संबंध चाहिए। छात्र जो श्रम करे उससे उसके अध्ययन का, छात्र कक्षा के अंदर और बाहर जिस समाज में जीता है उसके साथ उसका अपना और जिस प्रकृति के बीच वह जी रहा है, उससे जीवंत संबंध होना आवश्यक है। विचार मंथन के बाद डॉ. जाकिर हुसैन की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय समिति गठित हुई। जाकिर साहब उस समय दिल्ली की जामिया मिलिया विश्वविद्यालय के उप-कुलपति थे। बाद में वह देश के तीसरे राष्ट्रपति बने। उस समिति के अन्य सदस्यों में विनोबा भावे, काका कालेलकर आदि अनेक विद्वान थे। समिति ने गांधीजी की बुनियादी शिक्षा के तीन माध्यम बतलाये : कोई एक उत्पादक उद्योग, समाजिक जीवन तथा प्रकृति।

इस शिक्षा का असली आरम्भ बालक के परिवार से होता है। बालक के जीवन में उसके संस्कारी पालकों के स्नेहपूर्ण संबंध से परे जाकर शिक्षा का आरम्भ होता है। उससे ही उसके जीवन की सच्ची बुनियाद डाली जाती है। गांधीजी की कल्पना के अनुसार एक वर्ग में या कक्षा में पच्चीस छात्र हों। देश की जनसंख्या का ख्याल रखते हुए कक्षा में अधिक-से-अधिक तीस की संख्या को ठीक समझा गया। समग्र शिक्षण का माध्यम तो पूरा जीवन ही हो। परंतु सिखाने की भाषा का मातृभाषा होने की बात पर गांधीजी सहित सम्मेलन में उपस्थित प्रायः सभी विद्वानों ने जोर दिया। इस बात पर ध्यान आकर्षित किया गया कि दुनिया के सारे विकसित देश अपनी-अपनी मातृभाषा में ही शिक्षा देते हैं। केवल गुलाम मनोवृत्ति वाले देश ही अपने मौजूदा शासक या भूतपूर्व शासकों की भाषा छात्रों पर थोपकर उनसे शासकीय भाषा का बोझ ढुलवाते हैं।

सम्मेलन में गांधीजी ने इस बात पर भी जोर दिया कि यदि हम बालक का समग्र विकास चाहते हैं तो अपनी पढ़ाई में वह मात्र अपने कान या आँखों का ही उपयोग न करे, बल्कि उसे अपने हाथ, पैर, मस्तिष्क और हृदय को भी इस्तेमाल करने का मौका मिलना

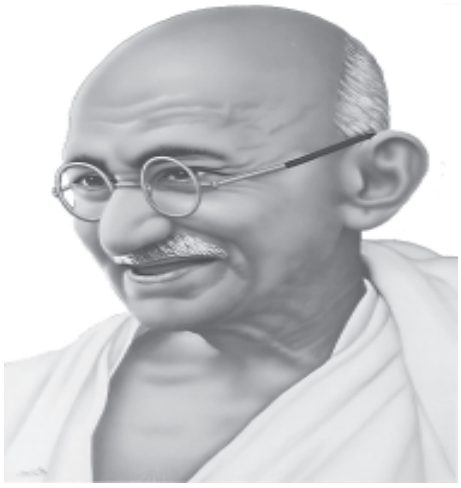

चाहिए। तभी उसे सर्वांगीण शिक्षा मिल पायेगी। गांधीजी ने शिक्षा की परिभाषा ही यह की थी कि बालक के अंतर में निहित सारे गुणों को खींचकर बाहर लाना। इसी बात को बाद में विनोबा ने अपनी विशिष्ट शैली में उद्योग, सहयोग और योग की तालीम कहा। मैं इस माध्यम को प्रीति का माध्यम कहता हूं। श्रम और बुद्धि से अलग-अलग करने से दोनों कमजोर होते हैं। श्रम यदि बुद्धिरहित हो तो वह जड़ और उबाने वाला बनता है और बुद्धि यदि श्रमविहीन हो तो उसमें किसी काम को करने की काबिलियत ही नहीं रहती। फलतः समाज में वर्गभेद खड़ा होता है और राहु-केतु सा सिरविहीन धड़ या धड़विहीन सिर जैसा समाज बनता जाता है।

श्रम स्वयं ही एक उत्तम शिक्षण साधन बन सकता है, क्योंकि श्रम महज खिलवाड़ नहीं है। उसमें भी एक आदर्श होता है। उस आदर्श के अनुसार उसे इस्तेमाल करने वाले

को श्रम के औजार, सामग्री और पद्धति के अनुशासन को मानना पड़ता है। ठीक ढंग से सिखाया हुआ श्रम छात्र को उत्पादन भी देता है और सृजन का आनंद भी।

आजादी की शिक्षा

गांधीजी के सम्मुख दूसरी चुनौती गुलामी की शिक्षा थी। मेकॉले के जमाने से यह चुनौती हम लोगों के सामने मुँह फाड़े खड़ी है। मेकॉले ऐसी शिक्षा देना चाहते थे, जिससे उनके देश का तंत्र चला सकने वाले बाबू लोग पैदा हों। ऐसी शिक्षा देने में उसे बड़ी सफलता हासिल हुई। एक जमाना था जब खेती को उत्तम और चाकरी को निकृष्ट समझा जाता था। परंतु आज तो नौकरी ही मानो शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य बन बैठी है। इसीलिए अमीर हों या गरीब, सारे पालक इसी बात की फिक्र में रहते हैं कि उनकी संतान अच्छा नौकर कैसे बने। विनोबा ने यह सुझाव दिया था कि जिस प्रकार आजादी आते ही यूनियन जैक नीचे उतरा और उसका स्थान तिरंगे झंडे ने लिया, उसी प्रकार गुलामी की सारी शिक्षा बंद होनी चाहिए और राष्ट्रीय शिक्षा के विषय में पर्याप्त सोच-विचार कर ऐसी शिक्षा प्रारम्भ की जाये जो आजाद भारत को शोभा देने वाली हो। लेकिन पुरानी शिक्षा-परम्परा जारी रही।

चूंकि गांधीजी आजादी की शिक्षा देना चाहते थे, इसलिए उन्होंने यह सुझाया था कि शिक्षा ऐसी हो जो छात्र को अपने पाँवों पर खड़ा रख सके। वैसे तो उस समय गांधीजी के सामने अंग्रेजों द्वारा खड़ी की हुई बुरी शिक्षा भी एक बड़ी चुनौती थी। अंग्रेजों ने ऐसी व्यवस्था की थी कि नशीली चीजों के पदार्थों की बिक्री से जो आय हो उससे शिक्षा का खर्च निकाला जाए। यानी यदि परिवार का एक लड़का नशा करे तो ही दूसरा लड़का शिक्षा प्राप्त कर पायेगा। गांधीजी कहते हैं कि हमें व्यसन मुक्ति भी करनी है और सात्विक शिक्षण भी देना है। इसलिए उन्होंने सुझाया कि छात्रों के उत्पादक परिश्रम से जो माल उत्पन्न हो यह सरकार खरीद ले और उसी से शिक्षकों का वेतन निकाला जाये। बाद में विशेषज्ञ समिति ने सुझाया कि विद्यार्थी के द्वारा किये गये उत्पादन और शिक्षकों के वेतन को आपस में जोड़ना ठीक नहीं होगा। आज के पूंजीवादी समाज में श्रम का मूल्य न्यूनतम किया जाता है और उसमें अगर बालकों द्वारा किया हुआ श्रम हो तो उसकी कीमत और भी कम आँकी जायेगी। वर्तमान पूंजीवादी समाज में शिक्षकों को यदि ठीक तरह जीना हो तो उन्हें वेतन भी उपयुक्त ही देना चाहिए। इसलिए मेरा सुझाव यह है कि बालकों के उत्पादन को शिक्षकों के वेतन से न जोड़ा जाए। सरकार अनेक चीजों में काँटछाँट कर शिक्षकों को उचित वेतन दे।

बुनियादी तथा उत्तर बुनियादी शिक्षा में एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह रहेगा कि सारी शिक्षा यथासम्भव मुक्त वातावरण में होगी। विद्यार्थी अपने समाज में इस प्रकार जीयेंगे कि उन्हें मुक्ति का स्वाद चखने का मौका मिलेगा। इसका मतलब यह भी होगा कि छात्र अपने कर्तव्य का बोध होने के बाद ही अधिकार माँग पायेंगे। अपने छोटे से समाज में किसी विषय पर अलग-अलग मत हो तो भी सारे मिलजुलकर सर्वसम्मत राय तक पहुँचना सीखेंगे। इस प्रकार अजादी की तालीम हासिल करके, आर्थिक क्षेत्र में अपने पैरों पर खड़े रहना व सामाजिक क्षेत्र में एकराय स्थापित कर निर्णय करना सीखेंगे। मुक्ति प्राप्त करना जितना स्वयं के लिए जरूरी है, उतना ही आवश्यक है कि दूसरों की मुक्ति का सम्मान किया जाय। यह था गांधीजी के सम्मुख खड़ी दूसरी चुनौती का जवाब। गांधीजी की नई तालीम का यह अनुभव है कि छात्रों को जिम्मेदारी सौंपने से वह जिम्मेदार बनते हैं। ❑

छपते-छपते : और अन्ततः

एक क्रांतिकारी गुरु का महाप्रयाण

'सर्वोदय जगत' का यह अंक जब प्रकाशन की प्रक्रिया पूरी करने के क्रम में छप कर आने को है, हमें सर्व सेवा संघ के पूर्व अध्यक्ष, शांति सेना और तरुण शांति सेना के एक महान कमांडर, गुरु और प्रशिक्षक श्री नारायण भाई देसाई के निधन का दुखद समाचार प्राप्त हुआ है और जिस कारण हमें अनायास ही इस अंक में बड़े फेर-बदल करने पड़े हैं और इस 'अंक' को यथासाध्य 'श्रद्धांजलि' अंक के रूप में परिवर्तित करना पड़ा है।

मेरे लिए नारायण भाई देसाई का अवसान एक महान गुरु, महान विचारक एवं एक महान संपादक का महाप्रयाण है। जिस तरह महादेव भाई देसाई और गांधी के बीच में नारायण भाई थे उसी तरह जेपी और नारायण भाई के बीच मैं था और वे मेरे पिता और महान गुरु दोनों थे, जिनसे एक तरुण शांति सैनिक के रूप में अहिंसक क्रांति को न केवल समझा बल्कि उस पर चलना भी सीखा।

एक महान गुरु की महान आत्मा को कोटिशः नमन्, विनम्र श्रद्धांजलि अपनी ओर से, मेरी पीढ़ी के उन तमाम तरुण शांति सैनिक जो बाद में शांति सैनिक बने उनकी ओर से तथा 'सर्वोदय जगत' की और उसके तमाम पाठकों की ओर से भी।

अन्य संचार माध्यमों से नारायण भाई के देहावसान पर गहरी संवेदना व्यक्त करने वालों तथा विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करने वालों में न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर धर्माधिकारी, सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष महादेव विद्रोही, महामंत्री शेख हुसैन, मंत्री विजय कुमार, चंदन पाल, सर्वोदय समाज के संयोजक आदित्य पटनायक, बिहार सर्वोदय मंडल की पूर्व अध्यक्ष कल्पना अशोक, सर्व सेवा संघ के ट्रस्टी टीआरएन प्रभु, डॉ. रामजी सिंह, तपेश्वर भाई, महावीर त्यागी, परिसर के संयोजक शिवविजय भाई आदि शामिल हैं।

–अशोक मोती, कार्यकारी संपादक

हस्तक्षेप

'सेक्युलर' तथा 'समाजवादी' प्रवृत्ति भारतीय संविधान का बुनियादी सिद्धांत है

❑ न्या. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी

भारतीय संविधान में गांधी विचार और समाजवादी संकल्पना के अंतर्भाव का विचार आज तक विचारकों ने किया ही नहीं। मूलतः जो भारत का संविधान सन् 1949 में पारित हुआ, उसकी उद्देशिका (प्रीअॅम्बल) में 'सोशलिस्ट' तथा 'सेक्युलर' यह दोनों शब्द नहीं थे। इतना ही नहीं नागरिक के लिए जो मूलभूत अधिकार और हक्क धारा 19 में विशद किये गये थे, उनमें धारा 19 (च) में सम्पत्ति के अर्जन, धारण और व्ययन का मूलभूत अधिकार सभी भारतीय नागरिकों को प्रदान किया गया था। जो समाजवादी संकल्पना विरोधी स्वतंत्रता आंदोलन की आकांक्षाओं के भी विपरीत व विसंगत भी था। उसके पश्चात संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम 1976 के द्वारा संविधान के उद्देशिका में 'समाजवादी' और 'पंथनिरपेक्ष' नामक दो शब्द दाखिल किये गये। लेकिन इन शब्दों की व्याप्ति का अर्थ क्या होगा इसकी कोई व्याख्या नहीं की गयी। उसके बाद संविधान के 44वें संशोधन अधिनियम 1978 द्वारा नगारिक के बुनियादी धारा 19 (1) (च) जो सम्पत्ति के अधिकारों से सम्बन्धित थी, उसे निरस्त कर, 'पंथनिरपेक्ष' और 'समाजवादी' शब्द की व्याख्या और व्याप्ति प्रस्तुत की गयी। 'पंथनिरपेक्ष' की व्याख्या थी सभी धर्मों का समान सम्मान। एक अर्थ में यह इन शब्दों का स्पष्टीकरण था। उस समय सत्ता में जनता पार्टी थी और उसी सरकार ने यह प्रस्ताव रखा था। यह प्रस्ताव लोकसभा ने पारित किया लेकिन इंदिरा कांग्रेस का राज्यसभा में बहुमत था इसलिए वह प्रस्ताव राज्यसभा ने नामंजूर किया। इसलिए आज भी उद्देशिका में यह शब्द है, लेकिन उनकी कोई व्याख्या नहीं है।

अगर 'समाजवाद' की संकल्पना का अर्थ सभी प्रकार के यानी राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक शोषण से मुक्ति नहीं है, तो फिर क्या है? यदि व्याख्या या स्पष्टीकरण को राज्यसभा ने मंजूर नहीं किया, तो फिर उस संकल्पना का दूसरा क्या अर्थ हो सकता है? यही यक्ष प्रश्न है। महात्मा गांधी ने शोषण रहित समाज की संकल्पना की थी। 10 सितंबर 1931 के यंग इंडिया में उन्होंने स्पष्ट किया था कि "मैं ऐसे संविधान की रचना करवाने का प्रयत्न करूंगा जो भारत को हर तरह की गुलामी और परावलम्बन से मुक्त करे।" 1 जून 1947 के हरिजन में गांधीजी ने लिखा—"समाजवाद का आधार आर्थिक समानता है। अन्यायपूर्ण असमानताओं की इस हालत में जहां चंद लोग मालामाल हैं, और सामान्य प्रजा को भरपेट खाना भी नसीब नहीं होता, उसे 'रामराज्य' कैसे कह सकते हैं?" इसीलिए गांधीजी ने 'विश्वस्त भावना' पर जोर दिया और अब तो अमेरिका और भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने भी यह स्पष्ट किया है कि सरकार या शासन नैसर्गिक सम्पत्ति के 'विश्वस्त' है मालिक नहीं। इसीलिए गांधीजी ने कहा था कि—समाजवाद में मूलतः और सर्वप्रथम 'समाजवादी' वृत्ति होगी। वह किसी भी प्रकार की हो, इसे ही तो 'समाजवाद' कहा जा सकता है। गांधीजी ने यह भी कहा था कि, मेरे समाजवाद का अर्थ है 'सर्वोदय' की दिशा। यही स्थिति 'पंथनिरपेक्ष' संकल्पना के बाबद भी है। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित शब्दावली में इस शब्द के लिए सर्वधर्म समभाव धर्मनिरपेक्ष, लौकिक अर्थ दिया है। दादा धर्माधिकारी ने कहा है 'सेक्युलर' शब्द का इतिहास वैसे बहुत पुराना है, लेकिन वह शब्द अलग अलग अर्थों में प्रयोग में लाया जाता था। जैसे 'सेक्यूलर गेम्स', 'सेक्यूलर क्लर्जी', 'सेक्यूलर ॲक्जिलरेशन ऑफ द मून' आदि। सर्वप्रथम जॉर्ज जेकब होलिओक ने सन् 1950 में कहा, 'धर्म और सेक्युलॅरिज्म' परस्पर व्यावर्तक हैं। वे एक दूसरे के क्षेत्र में प्रवेश न करें। धर्म में निहित नैतिकता हमें मान्य है, लेकिन उस नैतिकता का आधार धर्म नहीं होगा। इसके माने है कि 'सेक्यूलरिज्म' धर्मनिरपेक्ष हो तो भी धर्मविरोधी नहीं।

श्री रामकृष्ण परमहंस देव, स्वामी विवेकानंद, गांधी और विनोबा ने धार्मिक समन्वय पर जोर दिया। रामकृष्ण परमहंस ने अपने जीवन में भिन्न-भिन्न धर्मों का अनुष्ठान कर उनकी मूलभूत एकता का अनुभव किया। गांधी ने सामूहिक सर्वधर्म प्रार्थना का प्रवर्तन कर सर्वधर्म समभाव लोक-जीवन में चरितार्थ करने का प्रयत्न किया। और विनोबा ने सब प्रमुख धर्म-ग्रंथों का सार निकालकर उनका साम्य लोगों के सामने रखा। विनोबा ने इसी मर्म को पकड़ लिया और कहा *"आज के युग में धर्म और राजनीति कालबाह्य हो गये हैं। यह युग विज्ञान और अध्यात्म का है।" इससे यह पता चलता है कि 'सर्वधर्म समभाव' शब्द का प्रयोग भी सदोष है। तो हर एक इसका समर्थन केसे कर सकेगा? सर्वधर्म समभाव का प्रतिपादन करने वाले गांधी तो यहां तक कह गये कि अस्पृश्यता वेदविहित होगी तो मैं वेद भी नहीं मानूंगा। यानी धर्मनिष्ठा व्यक्ति की स्वधर्म श्रद्धा में भी विवेकपूर्ण मर्यादा होनी चाहिए। विवेक की मर्यादा के साथ ही गांधी ने अपने धर्म का पालन किया और उसकी नीतिविहीन विधियों का दृढ़ता से विरोध किया। दूसरे के हृदय में प्रवेश उसके धर्म द्वारा किया जाय, यह समाजशास्त्रीय सिद्धांत है।* लेकिन उसमें भी विवेक की मर्यादा तो रहनी ही चाहिए। इस दृष्टि से विवेकनिष्ठ

धार्मिक व्यक्ति अपने धर्म के बारे में जो भूमिका रखता है, वैसी ही विवेकनिष्ठ भूमिका दूसरे धर्मों के विषय में उसे रखनी चाहिए। हर किसी को अपने-अपने धर्म का अनुष्ठान और प्रचार करने की स्वतंत्रता हो, लेकिन मर्यादा होनी चाहिए मानवनिष्ठा और नीतिमत्ता। हमारे देश में आज यह नहीं हो रही है। इसलिए सर्वधर्म समभाव सध नहीं पा रहा है। दुनिया में नैतिक मूल्यों के विषय के कानून धर्म से आगे बढ़ गया है। कानून ने ऐसे कुछ सर्वव्यापी मूल्य स्थापित किये हैं, जो मानव मात्र पर लागू होते हैं। उस कानून में सम्प्रदाय, जाति या वंशवाद का कोई स्थान नहीं। इस अर्थ में वह कानून ही धर्मनिरपेक्ष या 'सेक्युलर' है। पूरी मानवता और जीवमात्र के लिए यथासम्भव करुणा उस कानून का आधार है। यहीं पर धर्म पीछे रह जाता है। सब धर्मों के लिए समान आदर हो, लेकिन उनमें मानवनिष्ठा और नैतिकता का अधिष्ठान हो, यह भी अत्यन्त जरूरी है। तब सर्वधर्म समभाव और 'सेक्युलॅरिज्म' यानी धर्म निरपेक्षता की भूमिकाओं में विलक्षण साम्य हो जाता है। 'सेक्युलॅरिजम' में धर्मनिरपेक्षता है, तो सर्वधर्म समभाव में किसी भी धर्म विशेष का आग्रह नहीं है।

यह संकल्पनाओं का स्पष्टीकरण नहीं है इसलिए सेक्यूलर शब्द के नाम पर अत्याचारों में भी वृद्धि हो रही है। मराठी के सुप्रसिद्ध कवि कुसुमाग्रज जी ने लिखा है कि, ''धर्म का ध्वज जब धर्मान्ध शक्तियों के कंधे पर रखा जाता है, तब उसके परिणामस्वरूप जो खून बहता है, वह हमेशा उसी धर्म का होता है। वैसे भी अगर संविधान के उद्देशिका के अन्य शब्द जैसे सामाजिक, आर्थिक, न्याय और उपासना की स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा और अवसर की समानता या संविधान की धारा 25, 26 तथा धारा 51 (क), जो नागरिक के मूल कर्तव्य के बाबत है, वह सब एक साथ पढ़े जायें, तो यह स्पष्ट है कि 'सेक्युलर' तथा 'समाजवादी' प्रवृत्ति भारतीय संविधान का बुनियादी सिद्धांत है। इसलिए अब उस बाबद विवाद खड़ा करना असंगत ही नहीं, बल्कि अमानवीय भी है। ❑

बराक ओबामा ने भी याद दिलाया भारतीय संविधान

❑ चिन्मय मिश्र

अमेरिका राष्ट्रपति की हालिया यात्रा और टिफिन सेंटर से आये भोजन में शायद ज्यादा फर्क नहीं है। अमेरिका का एकसूत्रीय एजेंडा है, अपने यहां की बड़ी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हितों की रक्षा। इस प्रक्रिया में जब वह अपने निकटतम सहयोगी यूरोपीय देशों के प्रति नरमी नहीं बरतता तो यह आशा करना ही फिजूल है कि भारत के प्रति उसका रवैया कुछ अलग होगा। आप उन्हें बराक ओबामा कहें, बराक हुसैन ओबामा कहें या बराक कहें, वह अंततः अमरीकी राष्ट्रपति हैं। अकारण व अनावश्यक आत्मीयता का विश्व राजनीति में कोई स्थान नहीं है। इन बदली परिस्थितियों में रसायन (केमिस्ट्री) नहीं भौतिकी (फिजिक्स) ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

वैसे यात्रा के अंतिम पड़ाव में उन्होंने भारतीय नागरिकों को धार्मिक सहिष्णुता की सीख देते हुए हमारे संविधान के अनुच्छेद 25, ''लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता का और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का बराबर हक होगा,'' की याद दिलायी। परंतु इस सौहार्द का सरोकार भी आर्थिक प्रगति से ज्यादा और वैश्विक सौहार्द से कम था। बहरहाल उनके कथन से यह तो साबित हो गया कि भारत की आंतरिक स्थिति पर दुनिया भर के राजनीतिज्ञों की पैनी नजर है और वे बढ़ती साम्प्रदायिकता के प्रभावों को ठीक-ठीक ढंग से समझ पा रहे हैं।

अमेरिका राष्ट्रपति की यात्रा अपने आगाज से अंजाम तक हमें यह अहसास दिलाने में कामयाब रही कि एक देश व व्यक्ति के नाते हम अमेरिका से कहीं न कहीं कमतर हैं। पूरा मीडिया उस दौरान जिस प्रकार के सम्मोहन में था, अब धीमे-धीमे उससे बाहर आ रहा है और विश्लेषण में जुटा है कि अंततः हाथ क्या आना? इस बीच विदेश मंत्री सुषमा स्वराज, प्रधानमंत्री मोदी की चीन और कुछ ही दिनों बाद उनका रूस जाने का भी कार्यक्रम तैयार हो रहा है। अमेरिकी राष्ट्रपति वापस वाशिंगटन पहुंच पाते और दुनिया के किसी राष्ट्राध्यक्ष की भारत की भूतों न भविष्यति जैसी सफल यात्रा समाप्त होने के चौबीस घंटे के भीतर मंत्रिमंडल ने एक असाधारण निर्णय लेते हुए विदेश सचिव सुजाता सिंह को एकाएक बाहर का रास्ता दिखाकर, अमेरिका में वर्तमान भारतीय राजदूत डॉ. जयशंकर को नया विदेश सचिव नियुक्त कर दिया। गौरतलब वह इसके पहले वह चीन में भारत के राजदूत रह चुके हैं।

अमेरिकी राष्ट्रपति सामान्यतया अपने देश के व्यापारिक हितों के मद्देनजर ही किसी देश की यात्रा करते हैं। परंतु भारत में उनकी यात्रा के पीछे का मकसद चीन का एशिया-प्रशांत क्षेत्र में बढ़ता प्रभाव था। एक चक्रवर्ती सम्राट की तरह वे कमोवेश यह ऐलान भी कर चुके हैं कि अमेरिका सर्वशक्तिमान है और इस क्षेत्र की नीतियां चीन नहीं अमेरिका ही तय करेगा। गोया कि दुनिया को अब अमेरिका व चीन में चुनाव करना है। शीतयुद्ध के जमाने में यह चुनाव अमेरिका व रूस के बीच में होता था। दूसरी तरफ हमारा गुटनिरपेक्ष होने का ढोंग भी तो हिलोरे मारता

रहता है। वास्तविकता यही है कि चीन की बढ़ती आर्थिक ताकत व दुनियाभर में आर्थिक मदद व व्यापार को लेकर उसकी गतिशीलता ने अमरिका को इतिहास में पहली बार वास्तव में डरा दिया है। अंतर्राष्ट्रीय वित्त संस्थानों की प्रतिस्पर्धा में चीन ने अपने अनुकूल वैश्विक वित्तीय संस्थान खड़े करना प्रारम्भ कर दिया है। जापान व आस्ट्रेलिया को छोड़कर एशिया प्रशांत क्षेत्र के अधिकांश देश उसके साथ हैं। कई मामलों में भारत व चीन एक स्तर पर साथ-साथ दिखायी पड़ रहे हैं। यही बेचैनी अमेरिकी राष्ट्रपति को अपने कार्यकाल में दूसरी बार भारत खींच लायी।

नागरिक परमाणु क्षेत्र में अमेरिका और भारत समझौता तो 10 बरस पहले ही कर चुके थे, परंतु भारतीय संसद द्वारा पारित परमाणु उत्तरदायित्व अधिनियम अमेरिकी कम्पनियों को रास नहीं आ रहा था और उनके हितों का संरक्षण राष्ट्राध्यक्षों के व्यक्तिगत हस्तक्षेप के बिना सम्भव नहीं था। अमेरिकी कम्पनियां जिस तरह के परमाणु रिएक्टर भारत को बेचना चाह रही हैं, उन्हें वे अभी केवल चीन को ही बेच पायी हैं। स्वच्छ ऊर्जा के बहाने परमाणु ऊर्जा की वकालत करने वाले अमेरिका ने पिछले चौंतीस वर्षों से अपने देश में एक भी परमाणु विद्युत संयंत्र नहीं लगाया है। दूसरी ओर वास्तविक हरित यानी सौर एवं पवन ऊर्जा में चीन आज विश्व में सिरमौर है और उसने तयशुदा लक्ष्य निर्धारित समय से तीन वर्ष पहले ही पूरा कर लिया है। इतना ही नहीं वह इस दोनों क्षेत्रों में सबसे कम लागत में संयंत्र लगाने में भी विशेषज्ञता प्राप्त कर चुका है तथा उसने नये परमाणु संयंत्र लगाना भी टाल दिया है।

यह सारी हड़बड़ाहट भी इस दौरे में साफ दिखी। अमेरिका अपनी ओर से थोड़ी बहुत छूट देने को तैयार हो रहा है, दूसरी ओर भारत अपने कानूनों की समीक्षा किये बिना बीमा किश्त का कोष बनाकर, संयंत्र निर्माण कम्पनियों को खुश करना चाहता है। परंतु अड़चन इतनी ही नहीं है। भारत यदि अपने यहां परमाणु विद्युत संयंत्र चाहता है तो यह अनिवार्य है कि वह इसे लेकर पहले जापान से स्पष्टता करे। गौरतलब है कि परमाणु संयंत्र तैयार करने वाली दो महत्त्वपूर्ण कमपनियों वेस्टिंग हाउस एवं जी ई को जापानी कम्पनियों ने खरीद लिया है। जी ई अंतर्राष्ट्रीय संयुक्त उपक्रम में जापानी कम्पनी हिताची ने 40 प्रतिशत भागीदारी कर ली है और वेस्टिंग हाउस इलेक्ट्रिक कम्पनी को तो सन 2008 में ही तोशीबा ने पूरी तरह से अधिग्रहित या खरीद लिया है।

सच्चिदानंद सिन्हा ने लिखा है, ''देश के प्रबुद्धजनों का खासा हिस्सा पिछले दिनों हमें इस बात से कायल करने की कोशिश करता रहा है कि विचारधारा बेकार की बकवास है। हमें राजनीति को 'मोरेलिटी प्ले' यानी नीति निर्देशक खेल नहीं बनाना चाहिए। हमें 'प्रेगमेटिक' होना चाहिए यानी स्थिति के अनुसार अपनी सुविधा सोचकर व्यवहार करना चाहिए।'' हम चीन, अमेरिका, रूस, आस्ट्रेलिया व जापान से किसी एक तयशुदा राष्ट्रीय नीति के तहत व्यवहार नहीं करते और नतीजतन कदमताल करते ही नजर आयेंगे। पिछले दो दशक इसी की गवाही दे रहे हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे अहम मसलों के बजाय हम परमाणु ऊर्जा जैसे गौण मसलों पर अपनी ऊर्जा खर्च करते रहते हैं। हम इस बात पर गौर नहीं करते कि ओबामा ने अपने कार्यकाल में पहला बड़ा परिवर्तन वहां की स्वास्थ्य नीति में करके सभी के लिए स्वास्थ्य की दिशा में कदम बढ़ाया है। भारत आने के महज दो दिन पहले उन्होंने अपने वार्षिक संबोधन में घोषणा की थी कि विश्व की बदलती परिस्थिति में उच्च शिक्षा की अनिवार्यता बढ़ती जा रही है। तीन में से दो रोजगार अब उन्हीं के लिए हैं। ऐसी परिस्थिति के मद्देनजर उन्होंने अमेरिका में हाईस्कूल तक की मुफ्त शिक्षा की तरह अब उच्च शिक्षा को भी मुफ्त बना दिया है। मगर हमारे यहां तो यह दोनों सबसे बड़े व्यापार बनते जा रहे हैं। फ्रांस के प्रसिद्ध अराजकतावादी लेखक प्रिंस क्रोपोटकिन ने कहा था कि, पुराने वास्तुशिल्प की भव्यता इसलिए थी कि उनका जन्म भव्य विचारों से हुआ था। हमारा संविधान भी भारतीयता नामक शिल्प से उपजा भव्य विचार है। भारत में अपने अंतिम भाषण में ओबामा ने तीन अल्पसंख्यक विशिष्ट व्यक्तित्वों शाहरुख खान, मैरी काम एवं मिल्खासिंह का नाम अकारण ही नहीं लिया था। यदि वे भारतीय भावना को अपने व्यापार के लिए सहेजे रखना चाहते हैं, लेकिन हमें इसे पूरी सभ्यता को सहेजने में उपयोग में लाना होगा। चंद्रकांत देवताले ने क्या खूब लिखा है,

आकाश की जात बता भईया?
धरती का धरम बता?
धुएं के पहाड़ में पथराई आँखों की
चुप्पी के ईश्वर का नाम बता? (सप्रेस)

राजकाज

अलोकतांत्रिक अध्यादेश राज

❑ भारत डोगरा

चुनी हुई सरकारों द्वारा संसद में बहस करवा कर कानून पारित करने के बजाए अध्यादेश जारी करना संवैधानिक अधिकारों का दुरुपयोग है। एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में केन्द्रीय मंत्री ने जिस लहजे में अध्यादेश जारी करने की वकालत की है, उससे भारतीय संसद की गरिमा को चोट पहुंची है। **–का. सं.**

मात्र सात महीनों में 9 अध्यादेश जारी कर एनडीए सरकार ने लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के उल्लंघन का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया है, जिससे आसानी से बचा जा सकता था। इनमें से कोई भी अध्यादेश ऐसे मुद्दे से नहीं जुड़ा था, जिसके लिए संसदीय प्रक्रियाओं का इंतजार नहीं किया जा सकता हो। अध्यादेश का औचित्य केवल ऐसे मुद्दों के लिए होता है जिन पर देरी होने से स्पष्ट राष्ट्रीय क्षति हो रही हो। एनडीए सरकार द्वारा जारी अध्यादेश इस श्रेणी में नहीं आते हैं। इतना ही नहीं, इनमें से अनेक अध्यादेश जनविरोधी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जारी किये गये हैं।

29 दिसंबर, 2014 को जारी किये गये अध्यादेश के माध्यम से सन् 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून में ऐसे संशोधन किये गये हैं जिससे विस्थापन का खतरा बढ़ जायेगा। इससे विशेषकर औद्योगिक कॉरीडर व पीपीपी परियोजनाओं द्वारा विस्थापन के खतरे की संभावना बढ़ जायेगी व इनके सार्वजनिक हित को निर्धारित करने में मनमानी बढ़ जायेगी। हाल ही में व्यापक विमर्श एवं लोकतांत्रिक बहस द्वारा बनाये गये कानून में इतनी जल्द संशोधन की क्या आवश्यकता पड़ गयी कि संसद के अगले अधिवेशन तक भी इंतजार नहीं किया जा सकता था?

ध्यान रहे कि जिस समय भूमि अधिग्रहण कानून पर व्यापक बहस हुई थी तो उस समय भाजपा ने भी कुछ सुधारों के सुझाव दिये थे व इन्हें संशोधन में शामिल किये जाने पर भाजपा ने अपनी संतुष्टि भी व्यक्त की थी। तो फिर अब इतनी जल्दी इस कानून को क्यों बदला जा रहा है?

एक अन्य अध्यादेश कोयला क्षेत्र के संदर्भ में लाया गया है। इसे कोयला खनन राष्ट्रीयकरण को कदम-दर-कदम समाप्त करने के प्रयासों के संदर्भ में समझना पड़ेगा। कोयला क्षेत्र के राष्ट्रीयकरण को समाप्त कर इस क्षेत्र का निजीकरण एक बड़ा विवादास्पद निर्णय होता। अतः इस क्षेत्र में निजीकरण के लिए एनडीए व यूपीए दोनों सरकारों ने चुपके-चुपके ऐसे कदम उठाये हैं, जिससे धीरे-धीरे कोयला क्षेत्र का निजीकरण हो सके। इसमें पहला कदम था कि संशोधन कर कोयले के केप्टिव खनन की अनुमति दी जाये। इस दिशा में सर्वप्रथम बिजली बनाने वाली कम्पनियों को अपने उपयोग के लिए कोयला खदाने दी जायें। दूसरा कदम यह है कि कोयला खनन क्षेत्र को अधिक खोलकर निजी क्षेत्र को सौंपा जाये।

एक अध्यादेश जीवनबीमा क्षेत्र में विदेशी निवेश बढ़ाने का है। जीवनबीमा के क्षेत्र में जीवनबीमा निगम ने बहुत सराहनीय सेवाएं की हैं। जरूरत तो जीवनबीमा निगम को और सशक्त करने की थी न कि विदेशी निवेश बढ़ाने की। जब से इस क्षेत्र में विदेशी निवेश आया है तब से जीवन बीमा निगम के लिए कठिनाईयां बढ़ गयी हैं। दूसरी ओर हाल के विश्व वित्तीय संकट के दौरान देखा गया था कि अनेक बहुराष्ट्रीय बीमा कम्पनियों ने अपने पालिसीधारकों के हितों के अनुरूप कार्य नहीं किया। इन कम्पनियों की सट्टे की या अधिक जोखिम की प्रवृत्तियों की भी आलोचना हुई व सरकारी सहायता से ही ऐसी कुछ कम्पनियां बच पायीं।

स्पष्ट है कि सरकार द्वारा अध्यादेश जनहित की रक्षा के लिए नहीं लाये जा रहे हैं बल्कि संदिग्ध उद्देश्यों के लिए लाये जा रहे हैं और यह व्यापक जनहित के विरुद्ध है। यह सवाल उठाना जरूरी है कि इन अध्यादेशों के पीछे कौन-सी शक्तियां सक्रिय हैं, जिनके कारण संसदीय प्रक्रियाओं के इंतजार के बिना इन्हें जल्दबाजी में लाना पड़ा। इस तरह के अध्यादेश राज पर रोक लगाकर सरकार को लोकतांत्रिक पद्धति से कार्य करना चाहिए, जिससे कि संसद की गरिमा व महत्त्व को कोई क्षति न पहुंचे। राज्य सरकारों को भी इसी तरह का व्यवहार करना चाहिए व जब तक जनहित से संबंधित कोई बड़ी मजबूरी न हो तब तक अध्यादेश का सहारा नहीं लेना चाहिए।

इस संदर्भ में राजस्थान सरकार द्वारा हाल में जारी अध्यादेश की ओर ध्यान दिलाना जरूरी है, जिसके द्वारा पंचायत राज प्रतिनिधियों के लिए अनिवार्य शैक्षिक योग्यता को लागू किया गया है। इसके कारण आगामी पंचायत चुनाव में अधिकांश ग्रामवासी सरपंच व अन्य महत्त्वपूर्ण पदों के लिए उम्मीदवार बनने के अपने संवैधानिक अधिकार से वंचित हो गये हैं। महिलाओं, दलितों व आदिवासियों के लिए तो यह अध्यादेश विशेष तौर पर लोकतांत्रिक अधिकारों के हनन का अध्यादेश है। इसी कारण से इस अध्यादेश का व्यापक स्तर पर विरोध हो रहा है।

लोकतंत्र के लिए अध्यादेश राज की यह प्रक्रिया खतरनाक है। अतः अध्यादेश राज को रोकने के लिए व्यापक स्तर पर आवाज उठानी चाहिए। ❑

गांधी-विचार को प्रतीक बनाएं

❑ किशनगिरी गोस्वामी

महात्मा गांधी ने कहा था कि उनका जीवन ही उनका संदेश है। आज गांधी को पूजने की होड़ लग गयी है। परंतु उनके विचारों को अपनाने की बात आने पर सब छिपते नजर आते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि गांधी को मूर्तिपूजा के ढकोसले से बाहर लाकर एक जीवंत विचार के रूप में प्रतिस्थापित किया जाये। **–का. सं.**

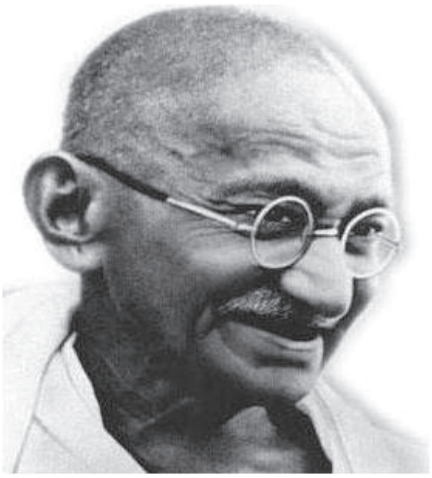

भारत को आजादी मिलने एवं महात्मा गांधी के देहावसान के पश्चात गांधी विचारों को आगे बढ़ाने का जितना काम संत विनोबा भावे ने किया, उतना आज तक अन्य कोई भी नहीं कर पाया। विनोबा को यह बात बड़ी अखरती थी कि हमने गांधी विचारों को अपने जीवन व व्यवहार में उतारने के बजाय मात्र प्रतीक पूजा पर ही ज्यादा ध्यान दिया है। यही कारण है कि देश में गांधी का गुणगान करने वालों की संख्या तो बढ़ती गयी, लेकिन उनके विचारों पर अमल करने वाले दिन-ब-दिन घटते गये। ऐसे में गांधी विचार का सिकुड़ना भी लाजमी था। विनोबा की प्रतीक पूजा की यह आशंका बजाय उस समय के वर्तमान में और अधिक प्रमाणित हो रही है। आज भारत के हर दफ्तर में गांधी की तस्वीर अवश्य होगी, पर गांधी वहां नहीं होंगे। उनकी सेवा-भावना, उनकी अहिंसा, उनका सत्य, उनकी ईमानदारी और गांधी के वे आदर्श नहीं होंगे, जिसके लिए उन्होंने छाती पर गोलियां खायी थी।

गांधी विचार के अनुसार हमें उस सभ्यता से बचना चाहिए जो मानवीय श्रम का निरादर करके लूट की तकनीक के सहारे खड़ी हो। वह पहले उपनिवेश बनाकर लूटती थी, तो 21वीं सदी में पूंजीनिवेश करके लूट रही है। यह नया साहूकार विश्व हमें उधारी के जाल में फँसाकर हमारी उस प्रकृति को लूट रहा है, जिस पर कभी हमारी प्रभुता टिकी थी। इसीलिए आज विश्व में परिवर्तनकारी से अधिक यथास्थितिवादी ताकतों का बोलबाला स्पष्टतौर पर दृष्टिगोचर हो रहा है। अतः मानव के बीच संबंधों को सुधारने में, युद्धों को निष्क्रिय करने में, उपभोक्तावाद को नियंत्रण में लाने में पृथ्वी को विनाश से रोकने एवं ऐसा करते हुए आने वाली पीढ़ी का भविष्य उज्वल बनाने के लिए बदलाव अत्यावश्यक है।

गांधीजी ने एक ऐसे भारत का सपना देखा था, जिसमें आदमी के लिए झोपड़ी तो अवश्य थी परंतु किसी के लिए भी अट्टालिका नहीं थी। जिसमें हर हाथ के लिए काम तो था, पर भारी उद्योगों के आगे बेकार हुआ आदमी नहीं था। हर खेत के लिए पानी था, परंतु पानी की एक-एक बूंद के लिए तरसता इनसान नहीं था। जिसमें हर व्यक्ति के लिए भोजन था। आज हम तथाकथित आधुनिकता एवं पश्चिमी विकास की अंधी नकल करते हुए आधी को छोड़कर पूरी के लिए दौड़े और उसमें अपनी आधी भी गँवा बैठे।

स्वामी विवेकानंद के अनुसार 'विश्व के तमाम देशों में जहां, जिसने जितना जोड़ा, उसे उतना ही अधिक सम्मान दिया जाता है, वहीं हमारे देश भारत में जिसने जितना छोड़ा उसे उतना ही महान समझा जाता है और जिसने जितना जोड़ा उसे उतना ही निचला दर्जा दिया जाता है। हमारे देश में भिखारी से आगे भी एक शब्द है, वह है भिक्षु। भिखारी का अर्थ है उस आदमी के पास धन कभी था ही नहीं। उसने धन को कभी जाना ही नहीं। जबकि भिक्षु का अर्थ है, उस आदमी के पास धन था, उसने धन को खूब जाना और परभूर उपयोग के पश्चात् उसे त्याग दिया। अर्थ को व्यर्थ समझा और उसकी उस प्रवृत्ति से निवृत्ति हो गयी। भारत में बुद्ध और महावीर जैसे महात्यागी हुए, जो राजसी ठाटबाट में पलकर भी भिक्षु बन गये।' इसी त्याग के कारण 2500 वर्ष पश्चात् भी संसार उनका स्मरण करता है, किसी राजा या धन्नासेठ का नहीं।

आज भारत में जिस तरह जाति वर्ग को हवा दी जा रही है, उससे लोग भयभीत से ज्यादा हैरान हैं। समझ में नहीं आता कि इस तरह की संकीर्णताओं का अंत कहां जाकर होगा। राष्ट्रों से राज्यों, फिर धर्म, भाषाओं, जातियों और फिर जिलों-मोहल्लों तक पहुंचते-पहुंचते यह नफरती माहौल अब घर के अंदर तक घुसने के फेर में है। इसके बाद यह सुंदर सृष्टि नरक बन जायेगी। इस नफरत का क्या खामियाजा भुगतना पड़ेगा, यह बताना मुश्किल है। सज्जन शकित इकट्ठा नहीं हो सकी है, और 'गांधी' को हम अगली पीढ़ी तक ठीक से नहीं पहुंचा सके हैं।

विगत 66 वर्षों में भारत ने लोकतंत्र की छाया में बड़े-बड़े नासूर झेले हैं। एक तो हमारा संविधान ही देश की संस्कृति से मेल नहीं खाता। ऊपर से अशिक्षा के आवरण में नीतियों का निर्माण होता है। जनता के सामने विकल्पों एवं राजनीतिक चेतना के अभाव→

अध्यादेश से बापू का संदेश

❑ कृष्ण प्रताप सिंह

अपने आराध्य राम की जन्मभूमि और राजधानी अयोध्या का बापू ने दो बार भ्रमण किया। यहीं पर उनका अमर संदेश 'पाप से घृणा करो, पापी से नहीं', सबसे पहले हम सबके कानों में गूंजा। बापू की इन दोनों यात्राओं पर केन्द्रित प्रस्तुत है यह आलेख।

–का. सं.

इसे विडम्बना कहा जाये, संयोग या कुछ और, लेकिन अपने रामराज के जिस सपने को साकार करने के लिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने संपूर्ण जीवन लगाया, उनकी राजधानी कहें या जन्मभूमि, अयोध्या में वे सिर्फ दो बार ही पहुंचे। अलबत्ता, अपने संदेशों से उन्होंने इन दोनों ही यात्राओं को महत्त्वपूर्ण बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

उनकी पहली यात्रा 10 फरवरी, 1921 को हुई। उस दिन अयोध्या व उसके जुड़वा शहर फैजाबाद में उत्साह व उमंग की ऐसी अभूतपूर्व लहर छायी थी कि लोग उनकी रेलगाड़ी आने के निर्धारित समय से घंटों पहले से ही रेलवे स्टेशन से लेकर सभास्थल तक की सड़क व उसके किनारे स्थित घरों की छतों पर जा खड़े हुए थे। हर कोई उनकी एक झलक पाकर धन्य हो जाना चाहता था। फैजाबाद के भव्य चौक में स्थित ऐतिहासिक घंटाघर पर बज रही शहनाई की धुन थी 'हमें आजाद कराने को श्री गांधी आते हैं।' अयोध्या में जालपा नाले के पश्चिम और सड़क से उत्तर तरफ स्थित मैदान में सभा होनी थी। इसी स्थान पर सन् 1918 में अंग्रेजों ने प्रथम विश्वयुद्ध में अपनी जीत का जश्न मनाया था। कांग्रेसियों ने गांधीजी की सभा के लिए जानबूझ कर इस मैदान को चुना था ताकि अंग्रेजों को उनका व गांधीजी का फर्क समझा सकें।

रेलगाड़ी के स्टेशन पहुंचने पर तिरंगा लहराते हुए कांग्रेस के दो स्थानीय नेता आचार्य नरेन्द्रदेव व महाशय केदारनाथ जब गांधीजी के डिब्बे में गये तो वहां उनका बड़ी ही अप्रिय स्थिति से सामना हुआ। पता चला कि गाड़ी के फैजाबाद जिले में प्रवेश करते ही गांधीजी ने अपने आसपास की सारी खिड़कियां बंद कर ली हैं और किसी से भी मिलने या बातचीत करने से मना कर दिया है। दरअसल, वे इस बात को लेकर नाराज थे कि उस दौरान अवध में चल रहा किसान आंदोलन खास उत्पाती हो चला था और उसूलों व सिद्धांतों से ज्यादा युद्धघोष की भाषा समझता था। उसके लिए अहिंसा कोई बड़ा मूल्य नहीं रह गयी थी। फैजाबाद जिले के किसान तो खासकर एकदम से हिंसा के रास्ते पर चल पड़े थे और बिडहर में बगावती तेवर अपनाकर उन्होंने तालुकेदारों व जमींदारों के घरों में आगजनी व लूटपाट तक कर डाली थी। यह स्थिति गांधीजी के बर्दाश्त के बारह थी। अनुनय विनय करने पर उन्होंने यह बात मान ली कि वे सभा में चलकर लोगों से अपनी नाराजगी जता देंगे।

उनके साथ खिलाफत आंदोलन के नेता अली बंधु भी थे, जो लखनऊ कांग्रेस में हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल देकर असहयोग और खिलाफत आंदोलनों के मिलकर एक हो जाने के बाद बदले हालात में गांधीजी के साथ-साथ दौरे पर निकले थे। मगर गांधीजी

→से सारी व्यवस्था कलंकित हो गयी है। आपराधिक पृष्ठभूमि के जनप्रतिनिधियों के आचरण से राष्ट्र का सिर शर्म से झुकने लगा है। कुमार प्रशांत के अनुसार, ''आज देशवासियों को बोट (नाव) से आये आतंक-वादियों से उतनी चिन्ता नहीं है, जितनी वोट (मत) से आये लोगों से है। जनता यह कहने लगी है कि राजनेता हमें बांटते हैं, आतंकी हमें एक करते हैं।''

सर्वोदय विचार के मुताबिक हमें आने वाली पीढ़ी को ऐसी शिक्षा देनी है जो उन्हें अस्थाई शरीर एवं स्थाई आत्मा में अंतर करना सिखाये। उन्हें यह सीख दे कि यह संसार हमारी सम्पत्ति नहीं है। न तो हमें इस पर अधिकार करने की लड़ाई लड़नी है और न ही मिल बाँटकर इसे भोगना है। हमें अपने नजरिये एवं जीवन जीने के तीरके को बदलना है। वैसे भी अब विभूतियों का युग समाप्त हो गया है एवं औसत लोगों का युग आरम्भ हो गया है। हमें यह गंभीर चिन्तन करना है कि गांधी, विनोबा व जयप्रकाश की त्रयी को मात्र प्रतीकों तक सीमित न रखकर उन्हें अपने जीवन में उतारने एवं जन-जन तक पहुंचाने की हमारी कितनी तैयारी है। एक दिन हमारा पूरा जीवन चंद लम्हों के लिए हमारी आँखों के आगे झलकेगा। कोशिश करें कि वह देखने लायक हो। ❑

जब मोटर पर सवार होकर जुलूस के साथ चले तो उन्होंने देखा कि खिलाफत आंदोलन के अनुयायी हाथों में नंगी तलवारें लिए उनके स्वागत में खड़े हैं। उन्होंने वहीं तय कर लिया कि वे अपने भाषण में हिंसक किसानों के साथ इन अनुयायियों की भर्त्सना से भी परहेज नहीं करेंगे। सूर्यास्त बाद के नीम अँधेरे में बिजली व लाउडस्पीकरों के अभाव में उन्हें सुनने को आतुर भारी जनसमूह से पहले तो उन्होंने हिंसा का रास्ता अपनाने के बजाय खुद कष्ट सहकर आंदोलन करने को कहा। फिर साफ व कड़े शब्दों में किसानों की हिंसा व तलवारधारियों के जुलूस की निन्दा करते हुए कहा कि हिंसा बहादुरी का नहीं कायरता का लक्षण है और तलवारें कमजोरों का हथियार हैं।

गौरतलब है कि देशवासियों को ये दो मंत्र देने के लिए उन्होंने उस अयोध्या को चुना, जिसके राजा राम के राज्य की कल्पना साकार करने के लिए वे अपनी अंतिम सांस तक प्रयत्न करते रहे। रात में वे जहां ठहरे वहां ऐसी व्यवस्था की गयी कि वे विश्राम करते रहें और उनका दर्शन चाहने वाले चुपचाप आते व दर्शन करके जाते रहें। हजारों की संख्या में किसानों ने उस रात आँखों में पश्चात्ताप के आँसू लिये अपने मुक्तिदाता के सामने मूक क्षमायाचना की थी। सुबह सरयू स्नान के बाद गांधीजी अपने अगले पड़ाव की ओर बढ़ गये तो भी किसानों द्वारा 'आंदोलन को धक्का पहुंचाने व शर्मिन्दगी दिलाने वाली' हिंसा उनको सालती रही। उन्होंने जवाहरलाल नेहरू से इन भटके किसानों को सही राह दिखाने को कहा।

गौरतलब गांधीजी ने यह तब कहा था, जबकि नेहरू ने उक्त हिंसा के एक दो दिन के भीतर ही हिंसक किसानों की सभा आयोजित कर उनसे सार्वजनिक रूप से गुनाह कुबूल करा लिया था और अनेक किसानों ने अपनी गलती स्वीकारते हुए खुद को कानून के हवाले कर लंबी-लंबी सजाएं भोगना स्वीकार कर लिया था। इस घटना से पता चलता है कि गांधीजी स्वतंत्रता के संघर्ष में सत्य व अहिंसा जैसे मूल्यों व नैतिक सैद्धांतिक मानदंडों के कितने कठोर हिमायती थे। यह बात तो सारा देश जानता है कि चौरीचौरा कांड के बाद उन्होंने समूचा असहयोग आंदोलन ही स्थगित कर दिया था।

सन् 1929 में वे अपने हरिजन फंड के लिए धन जुटाने के सिलसिले में एक बार फिर अपने राम की राजधानी आये। फैजाबाद शहर के मोतीबाग में हुई सभा में उन्हें उक्त फंड के लिए चांदी की एक अंगूठी प्राप्त हुई, तो वे वहीं उसकी नीलामी कराने लगे। ज्यादा ऊंची बोली लगे, इसके लिए उन्होंने घोषणा कर दी कि जो भी वह अँगूठी लेगा, उसे वह अपने हाथ से पहना देंगे। एक सज्जन ने पचास रुपये की बोली लगायी और नीलामी उन्हें के नाम पर खत्म हो गयी। तब वायदे के मुताबिक उन्होंने अंगूठी उन्हें पहना दी। सज्जन के पास सौ रुपये का नोट था। उन्होंने उसे गांधीजी को दिया और बाकी के पचास रुपये वापस पाने के लिए वहीं खड़े रहे। मगर गांधीजी ने उन्हें यह कहकर निरुत्तर कर दिया कि हम तो बनिया हैं, हाथ आए हुए धन को वापस नहीं करते। जब वह दान का हो तब तो और भी नहीं। इस पर उपस्थित लोग हँस पड़े और वह सज्जन भी उन्हें प्रणाम करके खुशी-खुशी लौट गये।

इस यात्रा में गांधीजी, धीरेन्द्र भाई मजूमदार द्वारा अकबरपुर में स्थापित देश के पहले गांधी आश्रम भी गये थे। वहां 'पाप से घृणा करो, पापी से नहीं' वाला अपना बहुप्रचारित संदेश देते हुए वह अंग्रेज पादरी स्वीटमैन के बंगले में ठहरे और आश्रम की सभा में लोगों से संगठित होने, विदेशी वस्त्रों का त्याग करने, चरखा चलाने, जमींदारों के जुल्मों का अहिंसक प्रतिरोध करने, शराबबंदी के प्रति समर्पित होने और सरकारी पाठशालाओं का बहिष्कार करने को कहा। इसके पश्चात अवध के उत्पाती किसानों ने भी न सिर्फ हिंसा का रास्ता त्यागा, बल्कि पुलिस के जुल्मों व ज्यादतियों को अविचलित रहकर सहना सीखा और गोरी सरकार को फौज की सहायता से अपने दमन का औचित्य सिद्ध करने के बहाने देने से मना कर दिया।

(सप्रेस)

गलती को स्वीकार करना आवश्यक

***मैं** अगर किसी सद्गुण का दावा करता हूं, तो वह मेरी सत्यनिष्ठा और अहिंसा-परायणता ही है। मैं अपने में किसी दैवी शक्ति होने का दावा नहीं करता। और न मुझे वैसी शक्ति की जरूरत ही है। मेरा शरीर वैसा ही नश्वर है जैसा कि किसी कमजोर से कमजोर मानव बंधु का है, और मेरे हाथ से भी वे सब गलतियां होने की संभावना हैं, जो कि उसके हाथ से हो सकती हैं। मेरी सेवाओं की अनेक मर्यादाएं हैं, परंतु उनकी अपूर्णताओं के बावजूद भगवान ने अभी तक उन पर अपना आशीर्वाद, अपनी कृपा बरसायी है।*

अपनी गलती को स्वीकार करना बड़ी अच्छी बात है। वह एक झाड़ू का काम करता है। जिस प्रकार झाड़ू तमाम गन्दगी को हटाकर जमीन को पहले से भी अधिक साफ कर देती है, उसी प्रकार अपनी गलती को स्वीकार करने से हृदय हलका और साफ हो जाता है। **–महात्मा गांधी**

('हिन्दी नवजीवन' 19-2-1922)

जलवायु न्याय में है जलवायु संकट का समाधान

❑ जागोडा मुनिक

जलवायु संकट एवं परिवर्तन से निपटने का सबसे महत्त्वपूर्ण समाधान ऊर्जा के उत्पादन वितरण और हमारे उपभोग में निहित है। आवश्यकता इस बात की है कि विकसित या औद्योगिक देश अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी स्वीकारते हुए एक बेहतर एवं सुरक्षित भविष्य के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दर्शाये। **–का. सं.**

विश्व भर के जलवायु वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि यदि हमने ऊर्जा उत्पादन का प्रदूषण भरा तरीका नहीं बदला तो हम जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से निपट नहीं पायेंगे। विज्ञान का मानना है कि जलवायु परिवर्तन खतरनाक स्तर पर पहुंच गया है और हम इसका प्रभाव विकराल बाढ़, सूखा, तूफाना आदि में देख सकते हें। विश्वभर के समुदाय व लोग इसे भुगत रहे हें और हमारी सरकार आजीविका को लेकर लापरवाह बनी हुई है।

वास्तविकता यह है कि हम वर्तमान में जिस तरह से ऊर्जा का उत्पादन, वितरण व उपभोग कर रहे है वह सुस्थिर नहीं है, अन्यायपूर्ण है और समुदायों, कर्मचारियों, पर्यावरण एवं जलवायु को नुकसान पहुंचा रहा हैं ऊर्जा से उत्पन्न उत्सर्जन जलवायु परिवर्तन का सबसे बड़ा कारण है तथा यह गरीब देशों के अरबों लोगों को उपलब्ध भी नहीं है। विश्वभर में ऊर्जा के मुख्य स्त्रोत है तेल, गैस और कोयला और यह समुदाय, उनकी भूमि, उनकी वायु एवं उनके पानी को नष्ट कर रहे हैं। इसके अलावा ऊर्जा के अन्य स्त्रोत जैसे परमाणु ऊर्जा, औद्योगिक कृषि ईंधन एवं बायोगैस, बड़े बांध एवं कचड़े से ऊर्जा उत्पादन भी हानिकारक कम नहीं है। इनमें से कोई भी ऊर्जा हमारे भविष्य के लिए सुरक्षित नहीं है।

इस जलवायु संकट के वास्तविक समाधान मौजूद हैं। इनमें शामिल हैं फॉजिल ईंधन का उपयोग रोकना, समुदाय आधारित ऊर्जा प्रणाली, कार्बन उत्सर्जन में जबरदस्त कमी, अपनी भोजन प्रणाली में रुपांतरण एवं वनों की कटाई रोकना। इसे संभव बनाने के लिए आवश्यक है कि ऊर्जा का उत्पादन स्थानीय एवं लोकतांत्रिक तरीके से एवं मानव अधिकारों का सम्मान करते हुए हो। इसे संभव बनाने के लिए आवश्यक है कि ऊर्जा का उत्पादन स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल, जलवायु सुरक्षित, वहनीय एवं सबके लिए ऊर्जा तैयार करें। साथ ही आवश्यक है कि ऊर्जा पर जीवन का निर्भरता कम करी जाए। साथ ही आवश्यक है कि नई विध्वंसक ऊर्जा परियोजनाओं पर रोक लगे एवं वर्तमान परियोजनाओं को शनैः शैनैः बंद किया जाए। इस हेतु व्यापार एवं निवेश के नियमों में बदलाव लाकर कारपोरेट प्रभाव कम करना होगा।

हमारी सरकारें किस इस समस्या से तरह से निपटना चाहती हैं? पिछले 20वर्षों से संयुक्त राष्ट्र संघ जलवायु परिवर्तन पर समझौते के लिए प्रयासरत है। लेकिन न तो हम जलवायु परिवर्तन रोक पाए और न ही इसकी रफ्तार धीमी कर पाए। हमारी सरकारें भी झूठे वादे कर रही हैं रीड यानि वनों के नाश एवं उनके स्तर के गिरने को रोकना से उत्सर्जन को कम करना भी एक जोखिम भरी प्रणाली सिद्ध हो रही है। इस से जलवायु परिवर्तन तो नहीं रुका बल्कि विपरीत प्रभाव पड़े। इससे गरीब एवं देश समुदाय संकट में पड़ गए और बड़े कारापोरेशनों ने खूब पैसा कमाया। हमारी सरकारें भी पिछले 20 वर्षों में सयुक्तराष्ट्र संघ के माध्यम से किसी शक्तिशाली एवं न्यायपूर्ण जलवायु समझौते पर नहीं पहुंच पाई हैं और सम्मेलन की ओर उठे छोटे-मोटे कदम भी सही दिशा में नहीं हैं। इसका सीधा सा कारण है किस संरासंघ ने इन अनुबंधों को लेकर अत्यधिक समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाया है। इसकी वजह कारपोरेशनों का दबाव है जो कि गंदी ऊर्जा के उत्पादन से लाभ कमा रहा है। गौरतलब है सभी बड़े कारपोरेशन बड़ी मात्रा में प्रदूषण फैलाते हैं।

दूसरा मुद्दा ऐतिहासिक जिम्मेदारी का है। विश्व के समृद्धतम, विकसित देश ही ऐतिहासिक रूप से कार्बन उत्सर्जन के लिए सर्वाधिक जिम्मेदार हैं। जबकि इन देशों में केवल 15 प्रतिशत आबादी ही निवास करती है और यही देश सबसे ज्यादा ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन भी करते है। जाहिर है जलवायु परिवर्तन के प्रलयंकारी प्रभावों से निपटने के लिए तो सभी के साथ आना होगा। हालांकि चीन, भारत व दक्षिण अफ्रीका में भी उत्सर्जन तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन उनका प्रति व्यक्ति अनुपात अभी कम है। दूसरी ओर लीमा में इस वर्ष कार्बन के बाजार को और फैलाने की जबरदस्त कोशिश थी। अमीर देशों का यह बेफिजूल सा प्रस्ताव है। दूसरी ओर संरासंघ

सन् 1992 से मानव निर्मित एंव खतरनाक जलवायु परिवर्तन को रोकने में प्रयत्नशील है, लेकिन स्थितियां जस की तस हैं। इसकी एक वजह यह है कि विकसित देश इस दिशा में बहुत कम प्रयास कर रहे हैं।

आवश्यकता इस बात की है कि सं.राष्ट्र संघ के भीतर बैठे विकसित देश अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी को समझे और जलवायु परिवर्तन से निपटने में गरीब देशों की सहायता करें। इसका अर्थ है बड़ी मात्रा में सार्वजनिक धन का हस्तांतरण एवं विकसित देशों की हरित तकनीकों को भी विकासशील देशों को हस्तांतरित किया जाए। इससे अर्थव्यवस्थाएं टिकाऊ बन पाएंगी। साथ ही साथ जलवायु परिवर्तन पर काबू पाने में मदद मिलेगी लोगों की आजीविका सुरक्षित हो पाएगी अधिक रोजगार सृजित हो पाएंगे एवं सभी के लिए वहनीय ऊर्जा तैयार हो पाएगी। इतने संकट के बावजूद संरासंघ की बातचीत गलत दिशा में जा रही है क्योंकि विकसित देश अभी भी अपना वायदा पूरा नहीं कर रहे हैं। न्यायपूर्ण समझौते के लिए आवश्यक है कि विज्ञान की उपलब्धता सभी के लिए सुनिश्चित हो वैसे दुनिया भर में लोग पेरिस सम्मेलन को लेकर सचेत हो गए हैं न्यूयार्क में करीब 4 लाख लोग इसे लेकर सड़कों पर आए और सारे विश्व में यही हो रहा है। वैसे दुनियाभर के लोग, सामाजिक आंदोलन कार्यकर्ता, युवा, किसान, महिला आंदोलन पेरु में हो रहे जन सम्मेलन में पहुंचे भी थे और उन्होंने सामुहिक तौर पर जलवायु परिवर्तन पर न्यायपूर्ण समझौते की आवाज उठाई। हमें अधिक व्यापक और मजबूत बनना होगा एवं सारी दुनिया के आंदोलनों का जलवायु न्याय को लेकर आवाज उठानी होगी। हमें यह विश्वास करना होगा कि जलवायु संकट का समाधान निकाला जा सकता है और वह हमारे हाथों में है। *(सप्रेस)*

निवेश संधियों से बढ़ते जोखिम

❑ केविन पी गाल्लाधेर

उभरती और विकासशील देशों को अर्थव्यवस्था को अपने अधीनस्थ रखने की कवायद में महाकाय बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा मिली सफलता से अभिभूत हो अमेरिका टी टी आई पी के माध्यम से अब युरोपीय एवं विकसित देशों की सरकारों को अपनी कंपनियों के अधीन लाने का प्रयास कर रहा है। जर्मनी ने इस चालबाजी को समझ कर विरोध करना प्रारंभ कर दिया है। नई आर्थिक विश्व व्यवस्था की नीयत पर प्रकाश डालता आलेख। **–का. सं.**

जर्मनी एवं यूरोप के बाकी देशों ने अमेरिका के साथ ट्रांस अटलांटिक व्यापार एवं निवेश भागीदारी (टी टी आई पी) के अन्तर्गत बड़े पैमाने पर व्यापार एवं निवेश समझौतो पर बातचीत के दौरान इस पर हस्ताक्षर करने पर यह कहते हुए सवाल उठाए हैं कि उनकी सरकारें किन आधारों पर निजी निवेशकों को यह अनुमति दे दें जिससे कि नए नियमन के तहत उन्हें अपनी आर्थिक समृद्धता को प्रोत्साहित करने के लिए संबंधित सरकारों पर मुकदमा दायर करने की अनुमति मिल जाए। वैसे उभरते हुए बाजारों एवं विकासशील देशों के लिए यह समाचार पुराना हो चुका है क्योंकि वे अपने नागरिकों के विकास के लिए मानव अधिकार नीतियों एवं पर्यावरण संरक्षण के मसले पर अपनी सरकारों के विरुद्ध कारपोरेट जगत की कानूनी मार पहले ही झेल चुके हैं। एक ओर युरोप इसमें निहित कमियों के चलते अमेरिका के साथ इस सौदे की लागत एवं लाभों पर विचार कर रहा है तो दूसरी ओर इस दिशा में पहल करने वाले दक्षिण अफ्रीका एवं इक्वाडोर जैसे देश इस मामले में सन्तुलित रहने का पाठ पढ़ा रहे हैं।

दक्षिण अफ्रीका और इक्वाडोर दोनों में पूर्व में अति दक्षिणपंथी सरकारें रहीं हैं जो कि विदेश केन्द्रित कुलीनतंत्र के पक्ष में थीं। इस शताब्दी की शुरुआत में दोनों ही देशों में इन सरकारों का तख्तापलट हो गया और ऐसी सरकारों की स्थापना हो गई जो कि विगत में व्याप्त असमानताओं को दूर करने के साथ अपने-अपने देश को व्यापक आधार केंद्रित समानतावादी समृद्धि की ओर ले जाने को तत्पर थीं। लेकिन इनके साथियों को अब इस बात की चिंता सता रही है कि दक्षिण अफ्रीका और इक्वाडोर में नई सरकारों के पदग्रहण कर लेने के पश्चात कहीं ये सरकारें विश्व के निवेशकर्ताओं यानि ''दक्षिणपंथियों'' को यह संकेत न भेज दें कि उनके लिए व्यापार के द्वार खुले हैं। इससे नाव के मझधार में डूबने का खतरा बढ़ जाएगा।

दोनों देशों के समक्ष रहस्योद्घाटन हुआ है कि उन्होंने ऐसी संधियो पर हस्ताक्षर कर रखे हैं जिनके अंतर्गत इस बात की अनुमति मिली हुई है कि उन्हें गुप्त ट्रिब्युनलों के समक्ष जवाबदेह ठहराया जा सकता है और इसके परिणामस्वरूप जिस समाज को वे उसका न्यायोचित हक दिलवाना चाहते है उसकी नींव

ही दरक जाएगी। पिछले कुछ दशकों के दौरान यदि विकासशील देशों ने अमेरिका या किसी यूरोपीय देश के साथ संधि पर हस्ताक्षर किए हैं तो वह अत्यधिक सूक्ष्म निरीक्षण में है। दूसरी ओर यदि यह देश महज विश्व व्यापार संगठन के सदस्य हैं, तो वहां पर केवल एक राष्ट्र ही दूसरे राष्ट्र के खिलाफ मामला दायर कर सकता है। परन्तु विकासशील देशों के साथ अक्सर ऐसे समझौते नहीं होते और निजी कंपनियों को सीधे सरकार पर मुकदमा दायर करने की अनुमति होती है।

दक्षिण अफ्रीका में विदेशी निवेशकों को आकर्षक खनिज क्षेत्र को लेकर सरकार के विरुद्ध मुकदमा चलाने के लिए अधिक समानता वाली धारा में कुछ कमियां पकड़ में आयी। दक्षिण अफ्रीका में अब आवश्यक है कि ऐसी कंपनियों का आंशिक स्वामित्व 'ऐतहासिक रूप से लाभ से वंचित व्यक्तियों' के पास हो। इक्वाडोर में विदेशी निवेशकों ने उन नये पर्यावरणीय नियमों के आधार पर देश पर हमला बोला, जिसके अंतर्गत विदेशी फर्मों को अपने कार्य ठीक से करने के लिए बाध्य किया गया था। यह नियम है कि उन स्थानीय एवं देश समुदायों के साथ मिलकर कार्य करना, जिनका लंबे समय से शोषण किया जा रहा था।

विदेशी फर्मों द्वारा अश्वेतों के सशक्तिकरण संबंधित कानून पर हमला किये जाने के पश्चात, दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने एक प्रक्रिया प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत सभी भागीदार प्रत्येक द्विपक्षीय निवेश संधियों की समीक्षा करेंगे। सरकार का यह निष्कर्ष था कि ये संधियां उस नये संविधान के तारतम्य में नहीं हैं, जिसका कि लक्ष्य है मानव अधिकारों की पुनर्स्थापना एवं दक्षिण अफ्रीकी नागरिकों के लिए रोजगार के अवसरों में बढ़ोत्तरी करना। समीक्षा में पाया गया कि द्विपक्षीय निवेश नीतियां संवैधानिक रूपांतरण के एजेंडे को लागू करने की राह में सरकार की क्षमता के सामने जोखिम एवं सीमाएं प्रस्तुत कर रही हैं। समीक्षा के पश्चात दक्षिण अफ्रीका की सरकार इस निष्कर्ष पर पहुंची कि द्विपक्षीय निवेश नीतियां अब बेकार हो चुकी हें और जनहित में नीतियां बनाने की दिशा में जोखिम बढ़ाती जा रही हैं। इस आधार पर सरकार ने हाल ही में अनेक द्विपक्षीय निवेश नीतियों को रद्द करने की दिशा में कदम उठाया है। दक्षिण अफ्रीका अभी भी विदेशी पूंजी के जाल में फँसा हुआ है। वह अत्यन्त सावधानीपूर्वक इन संधियों से अपने को अलग करते हुए पुनः नये समझौते के लिए भी तैयार है। इसी तरह ऑक्सीडेंटल पेट्रोलियम कारपोरेशन ने गुप्त ट्रिव्युनल के अंतर्गत इक्वाडोर पर हमला करने के साथ ही साथ तेल के कुओं से भी स्वयं को अलग करना शुरू कर दिया है। आक्सीडेंटल एवं अन्य कंपनियां इक्वाडोर के नये संविधान से टकराहट पर हैं जिसके अंतर्गत वह अतीत की असमानताओं को दूर करना चाहती है एवं अपने देश निवासियों के साथ बेहतर व्यवहार करते हुए अपनी समृद्ध परिस्थितिकी का संरक्षण करना चाहती हैं।

यह दोनों ही देश अत्यन्त सुदृढ़ नैतिक एवं आर्थिक आधार पर खड़े हैं। दोनों ही देशों में ऐसी सत्ता रही है, जिसने पूंजीवाद नहीं बल्कि अन्यायमूलक असमानता के बल पर शासन किया था। दूसरा यह कि इन व्यापार एवं निवेश नीतियों ने वह लाभ नहीं पहुंचाए जिनका कि उन्होंने वायदा किया था। इस तरह की संधियां दावा करती हैं कि इनके माध्यम से अधिक मात्रा में विदेशी निवेश आयेगा और आर्थिक विकास में तेजी आयेगी। जबकि अधिकांश आर्थिक विश्लेषकों का मत है कि इस तरह की संधियों से वैसे तो विदेशी निवेश आता ही नहीं है और यदि आता भी है तो यह आवश्यक नहीं है कि आर्थिक वृद्धि से तालमेल बठा पाये। ब्राजील एक ऐसा देश है जिसने इन संधियों पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया है लेकिन बावजूद वहां विकासशील देशों में दूसरा सर्वाधिक विदेशी निवेश हुआ है।

संयुक्त राष्ट्र की व्यापार एवं विकास सम्मेलन की नवीनतम रिपोर्ट ने यह स्थापित कर दिया है कि निवेश संधियां विदेशी निवेश आकर्षित करने में बहुत मददगार साबित नहीं हुई हैं। इसके अतिरिक्त पीटरसन इंस्टीट्यूट फॉर इंटरनेशनल इकॉनामिक्स के नये शोध में यह सुनिश्चित किया है कि यदि विदेशी निवेश किसी देश में आया भी हो तो यह आवश्यक नहीं कि वह आर्थिक वृद्धि में सहायक होगा। वस्तुस्थिति यह है कि अनेक मामलों में विदेशी फर्मों ने ऐसे व्यापार में धन लगाया, जिससे स्थानीय लोगों का रोजगार छिन गया और उसका नकारात्मक प्रभाव पड़ा। दक्षिण अफ्रीका और इक्वाडोर दोनों के द्वारा इन नीतियों का पुनर्मूल्यांकन किये जाने के बावजूद उनकी स्थिति मजबूत बनी रही है, ठीक ऐसा ही जर्मनी एवं अन्य यूरोपीय देशों के साथ भी होगा। हाल के वर्षों में इक्वाडोर की 'क्रेडिट रेटिंग' में जबरदस्त सुधार हुआ है।

वैश्विक आर्थिक प्रशासन और वैश्विक पूंजी बाजारों ने भी यह महसूस करना शुरू कर दिया है कि राष्ट्रीय सरकारों के ऊपर निजी पूंजी को वरीयता देने से लाभ के बजाए राजनीतिक व आर्थिक संकट अधिक पैदा होंगे। जर्मनी और यूरोप के उसके जोड़ीदार देशों को चाहिए कि इस दिशा में पहल करें और यह सुनिश्चित करायें कि टी टी आई पी केवल बाजार पूंजीवाद नहीं बल्कि अपने नागरिकों के कल्याण की दिशा में ही कार्य करे। ❑

गतिविधियां एवं समाचार

संपूर्ण गोवंश रक्षा कैसे

गोवंश की रक्षा, सेवा एवं उपयोगिता के लिए हमें एक सामूहिक दृष्ट पैदा करनी है, गोवंश बचेगा तो किसान बचेगा। गोवंश को देश, समाज एवं हर परिवार के साथ जोड़ देना है। यह कौन करेगा? कब होगा? कैसे होगा?

देश में होने वाले गोवंश हत्या से विनोबा बेचैन थे, इसलिए उन्होंने 22 से 27 अप्रैल 1979 को उन्होंने उपोषण किया था। पर सफलता न मिलने से उन्होंने जनवरी 1982 को देवनार कत्लखाने पर सत्याग्रह करने का आवाहन किया। उस वक्त संपूर्ण भारत से इस सत्याग्रह के लिए बड़े पैमाने पर प्रतिसाद मिला। लेकिन विनोबा अपने को छोड़कर चले गये, उस दिन से गोवंश का काम शिथिल होता जा रहा है।

देश को गहरे अंधकार की तरफ ले जाया जा रहा है और मुट्ठीभर लोग जिसे विकास का उजाला बता रहे हैं, हम उसमें विनाश की पदचाप सुन रहे हैं। आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और नैतिक स्तर पर जैसी गिरावट हम आज देख रहे हैं, वह अभूतपूर्व है। ऐसे गाढ़े वक्त में हमारा मूक व असहाय दर्शक बना रहना गांधी के प्रति, नागरिक-धर्म के प्रति और व्यक्तिशः अपने पुरुषार्थ के प्रति अक्षम्य द्रोह होगा।

गांधी ने अहिंसक प्रतिकार का जो रास्ता हमें दिखाया था, वह आज हमारी कसौटी करना चाहता है और इस वक्त यदि हम इस चुनौती को स्वीकार न कर सके तो देश में अराजकता और तानाशाही का खतरा आसन्न है।

धर्म न हिन्दू बौद्ध है, धर्म न मुसलीम जैन।
धर्म चित्त की शुद्धता, धर्म शांति सुख चैन।।

किसान आत्महत्या कर रहा हो, गोवंश, खेती-किसानी, ग्रामोद्योग और गांव समाप्त किये जा रहे हों, घोर बेकारी, विषमता, शोषण, अन्याय, भ्रष्टाचार, हिंसा और आतंक का जोर दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, वैश्वीकरण, उदारीकरण के नाम पर एक नई गुलामी दस्तक, देश के दरवाजे पर दी जा रही है, भ्रष्ट सरकार, पतनोन्मुख समाज, सामान्यजन, द्रोही व्यवस्था, वंचितों में बढ़ता असंतोष व सुलगती आग, परिवर्तन के नाम पर हिंसा के परिणामस्वरूप अराजकता एवं तानाशाही के अलावा और क्या होगा? ऐसी असहाय परिस्थिति में हम गांधीजनों के मन में यह सवाल उठना स्वाभाविक ही है कि आज हमारी भूमिका क्या होनी चाहिए? क्या हम असहाय, मूकदर्शक बनकर, इसे देखते रहेंगे या इसे रोकेंगे, और गांधी के सपनों का नया भारत बनाने की दिशा में कोई सार्थक प्रभावी पहल करेंगे?

अकेला आदमी कमजोर भी पड़ जाता है और निरुपाय भी। इसलिए आज देश में दो ही आवाजें सुनाई देती हैं। निराश की आवाज और विघटन की आवाज...वह तीसरी आवाज कहां खो गयी, जो हमें गांधी ने सिखायी थी, विधायक विकल्पों और रचनात्मक संघर्ष की आवाज...।

–हरिभाऊ तेलंग

नारायण भाई को श्रद्धांजलि

सर्व सेवा संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष, सर्वोदय आंदोलन के मार्गदर्शक एवं वरिष्ठ गांधीवादी श्री नारायण देसाई का 15 मार्च 2015 को 90 वर्ष की आयु में निधन हो गया। सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी में 16 मार्च, 2015 को श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया, जिसमें प्रकाशन, परिसर व सर्वोदय जगत परिवार के सभी भाई-बहनों ने 'सर्वधर्म प्रार्थना' का पाठ कर अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

श्रद्धांजलि सभा में श्री नारायण भाई के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन के संयोजक अशोक भारत, सर्व सेवा संघ के पूर्व महामंत्री अविनाश चन्द्र, संजय सिंह, अनूप नारायण आचार्य आदि ने प्रकाश डाला।

तत्पश्चात् दो मिनट का मौन रखकर उनकी आत्मा की शांति एवं परिवारजनों को यह असह्य दुःख सहने की शक्ति प्रदान करने हेतु उपस्थित सभी भाई-बहनों ने ईश्वर से प्रार्थना की। **–स.ज. प्रतिनिधि**

संपादक के नाम पत्र

प्रिय भाई श्री अशोक मोती जी,

सादर जयजगत!

'सर्वोदय जगत' का 1-15 जनवरी का अंक मेरे हाथ में है। इस अंक में एक से बढ़कर एक लेख छपे हैं। इन्हें पढ़कर आपको बधाई दिये बिना कोई न रह सकेगा। 'गांधी बनाम नेहरू बनाम पटेल' लेख में एक-दूसरे के कितने नजदीक और एक-दूसरे को कितना सम्मान देते थे, यह उन लोगों के गाल पर एक सीधा और सच्चा चपत है जो इन तीनों को एक-दूसरे का विरोधी बताकर भोली जनता को गुमराह करने में योजनापूर्वक लगे हुए हैं। मतभेद का होना विकास के लिए आवश्यक है। मनभेद न होने की हिदायत आज भी सबके लिए आवश्यक है।

सरदार पटेल शांति प्रिय थे वो कहते हैं कि तभी तो मैं अपने नायक पूज्य गांधीजी के साथ जीवन भर टिका रहा। पंडित जवाहरलाल नेहरू अपने को वे सर्वाधिक पारदर्शी मानते थे। इन्हें बांटकर देखने वाले और कहने वाले सच्चाई पर पर्दा डाल कर झूठ बोल रहे हैं। ऐसे लोगों से सबको सावधान रहना चाहिए।

इसी अंक में 'गांधी की हत्या : क्या सच, क्या झूठ' लिखकर आपने सच्चाई पेश की है। इससे स्वतः ही झूठ का खंडन हो जाता है। कितनी भी बातें बनाने वाले लोग बेनकाब हैं। वे सच को झूठ और झूठ को सच नहीं कर सकतें जो लोग चुनीकाका की पुस्तक पूरी न पढ़ सकें उन्हें इस लेख से बहुत-सी सच्ची जानकारी हो जायेगी। मेरी राय है कि इस लेख का एक फोल्डर बनाकर बड़े पैमाने पर बँटवाया जाय। आपने पत्रिका की दोबारा प्रतीक्षा पैदा कर दी है। आप की मेहनत का ही ये कमाल है। मैं तो इस पत्रिका को अधिक लोगों तक पहुंचाकर सर्वोदय-विचार के प्रचार में सहायक बनना चाहता हूं।

–महावीर त्यागी, *अध्यक्ष, ह.प्र.स.मंडल*

कविता

किसी अंधे कुएँ में गिर पड़ी है देश की जनता

❑ श्यामनारायण पाण्डेय

जो दिखते हैं खिले चेहरे, उन्हीं में हैं सिले चेहरे।
मनुष्यों की विरासत में, मिले तिनमंजिले चेहरे।।
किसी में लौक मंगल है, किसी में छद्म है छल है।
जहाँ है तीसरा चेहरा, वहाँ घनघोर जंगल है।।

हँसी की जगमगाहट में, अधर पर नाचते झाँसे।
विचारों में करीने से, बिछे शतरंज के पाँसे।।
चमकती आस्तीनों की, तहों में साँप बैठे हैं।
पहन कर्तव्य का चेहरा, भयानक पाप बैठे हैं।।

नजारे देश-सेवा के, हवाओं में लटकते हैं।
युवक बेकारियों की, अंध गलियों में भटकते हैं।।
सड़क पर सिर पटकते हैं, प्रजा के अनकहे दुखड़े।
दुकानों की सजावट में, टँगे गणतंत्र के मुखड़े।।

कहाँ पर कौन रक्षक है? कहाँ पर कौन भक्षक है?
कहाँ, किस आदमी की शक्ल पहने कौन तक्षक है?
नहीं पहचान कोई, आँख में कब धूल झोंकेगा?
कि किसका हाथ, किसकी पीठ में तलवार भोंकेगा?

खड़े हर मोड़ पर चाकू, न कोई रास्ता दूजा।
जिधर चाहे उधर भागे, कटेगा किन्तु खरबूजा।।
भला यह ताब किसमें है, कि भाँडा पाप का फोड़े?
हवा की चाल में उड़ते, प्रबल भूचाल के घोड़े।।

लगी है होड़ आपस में कि कितना कौन बिकता है?
कि गोली और गाली की गली में कौन टिकता है?
कि किसी चाल में छल है? किसकी बाहु में बल है?
कि किसकी मुट्ठियों में बन्द, आदमखोर जंगल है?

कि किसके भाषणों से झूठ की बरसात होती है?
कि किसे सूर्यमुख को देखते ही रात होती है?
हिमालय की नकल में तानकर सिर कौन ऐंठा है?
कि किसके पेठ में यह देश, कितनी बार बैठा है?

विलक्षण छद्म के दुर्भेद्य जंगल में धँसू कैसे?
छिपे हैं दूध में विषधर कि हीठों को डँसूँ कैसे?
न इसको तोड़ सकता हूँ न इसको छोड़ सकता हूँ।
प्रजा के तंत्र का रंगीन नाटक मैं निरखता हूँ।।

सुनहली योजना पहने, सजे हैं काठ के घोड़े।
प्रजा के दंडवत में सो रहे कानून के जोड़े।।
महकते आफिसों की जेब में हुक्काम बैठे हैं।
महाभारत लिए सिर पर, सिफर परिणाम बैठे हैं।।

जहाँ पर नोट गिरता है, वहीं पर वोट गिरता है।
प्रजा के पेट पर हर चोट का विस्फोट गिरता है।।
कहीं पर जाति का झगड़ा, कहीं पर धर्म का रगड़ा।
बिछे शतरंज के मोहरे कहीं अगड़ा, कहीं पिछड़ा।।

प्रजा की फिक्र में दिन-रात चाँदी काटते अफसर।
प्राजा के पाँव की जूती, बरसती है प्रजा के सर।।
अशिक्षा में अनिच्छा में, जड़ी है देश की जनता।
किसी अंधे कुएँ में गिर पड़ी है देश की जनता।।

भयानक एक दलदल में, खड़ी है देश की जनता।
मगर तुर्रा यही, सबसे बड़ी है देश की जनता।।
बड़प्पन का विकट विषधर, प्रजा का रक्त पीता है।
प्रजापालक समझता है प्रजा पका पपीता है।।

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार, कार्य.संपादक : अशोक मोती। छपी प्रतियाँ : 1450